चतुर्थ अध्याय:

महिला लेखिकाओं की आत्मकथाओं में निरूपित समस्याएं।

4.1 सामाजिक समस्या ।

4.1.1 पुरुषप्रधान समस्या ।

4.1.2 भ्रूण हत्या ।

4.1.3 अनमेल विवाह ।

4.1.4 महिला पर पुरुष का वर्चस्व ।

4.1.5 अधिकारों से वंचित ।

4.1.6 दोयम दर्जे का स्थान

4.2 आर्थिक समस्या ।

4.2.1 महिला बेरोजगारी ।

4.2.2 प्रत्यक्ष रूप से निर्णय लेने का अभाव

4.2.3 आय पर पुरुषों का वर्चस्व ।

4.2.4 स्त्री की हर चीज पर पुरुष का वर्चस्व ।

4.2.5 पारिवारिक संपत्ति में सामाजिक रूप से हिस्सा न मिलना ।

4.3 धार्मिक समस्या ।

4.3.1 अन्धविश्वास ।

4.3.2 व्रत उपवास का पाखण्ड ।

4.3.3. स्त्री देवी का रूप

4.3.4 रिश्तों में बंधी हुई ।

4.3.5 धार्मिक रूप में शोषण ।

4.4 राजनीतिक समस्या ।

4.4.1 समान दर्जा न मिलना ।

4.4.2 महिला उम्मीदवार पर पति का हक ।

4.4.3 राजनेताओं द्वारा महिलाओं का शोषण ।

4.4.4 प्रत्यक्ष रूप में महिलाओं की भागीदारी की समस्या ।

4.4.5 राजनीति में स्त्री व पुरुष के अधिकारों में टकराव ।

4.5. जातीय संघर्ष की समस्या

4.5.1 वर्ग संघर्ष की समस्या ।

4.5.2 क्षेत्रीय संघर्ष की समस्या ।

4.5.3 धार्मिक संप्रदाय की समस्या ।

4.6 सांस्कृतिक समस्या ।

4.6.1 मानवीय मूल्यों का विघटन ।

4.6.2 नैतिकता का पतन ।

4.6.3 पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव

4.6.4 भौतिकवाद का प्रभाव ।

निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

महिला लेखिकाओं की आत्मकथाओं में निरूपित समस्याएँ

4.1 सामाजिक समस्याएं

भारतीय सतानत संस्कृति सृष्टि की सबसे प्राचीन संस्कृति है। यहाँ पर पुरूष हो या महिला दोनों की स्थिति सदैव समान नहीं रही। समय के साथ-साथ इसमें परिवर्तन होते रहे हैं। किंतु पुरूष, महिलाओं की स्थिति में ज्यादा उतार-चढ़ाव रहा है। वैदिक काल से लेकर वर्तमानकाल तक महिलाओं के अधिकारों में बहुत से परिवर्तन हुए। वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति बहुत ही समृद्ध थी। समाज तथा परिवार में उनका सम्मान पुरूषों से उपर था। उन्हें उच्च का भी अधिकार था। पारिवारिक विरासत में वे बराबर की हकदार थी। किसी भी प्रकार की समाजिक सभा में उनका भाग लेना तथा अपने निर्णय करना सभी को मान्य होता था। अर्थात इस समय पुरूषों के मुकाबले महिलाएं ज्यादा शक्तिशाली थी सामाजिक स्तर पर। प्राचीन हड़प्पा सभ्यता से तो पता चलता है कि उस समय पितृसत्तात्मक व्यवस्था न होकर मातृसत्तात्मक व्यवस्था थी। वैदिक काल में समाज चार वर्णों में विभक्त था। प्राचीन काल के अध्ययन से पता चलता है कि इन चारों ही वर्णों में महिलाओं की सिथति समृद्ध थी। किंतु समय के साथ साथ महिलाओं की स्थिति में बदलाव आते गए।

वैदिक युग के पश्चात समाज की वर्ण व्यवस्था धीरे-धीरे जाति व्यवस्था में बदलने लगी। इस बदलाव ने पितृ सत्तात्मक व्यवस्था को जन्म दिया। किंतु फिर भी

समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी थी मनुस्मृति में कहा गया है कि - "यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवताः[320]।" इस प्रकार हम हमारे प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति का अनुमान बहुत ही सहज रूप से लगा सकते है। भारत में लगभग 10वीं शताब्दी तक महिलाओं की सामाजिक स्थिति अच्छी थी। किंतु जब से भारत पर विदेशी आक्रांताओं के हमले होने आरम्भ हुए तब तो महिलाओं की सामाजिक व पारिवारिक स्थिति तेजी से गिरने लगी। मुसलमानों के हमलों के डर से सारे भारत में आम जनता में डर का माहौल था। ऐसी स्थिति में महिलाओं का घर से बाहर जाना, उनका पढ़ना-लिखना सब बंद हो गया। क्योंकि मुस्लिम लोग हिन्दू घरों की बहन-बेटियों को जबरदस्ती उठाकर ले जाते थे। इसी डर के कारण भारतीय समाज की महिलाओं में पर्दा-प्रथा, बाल विवाह आदि कुरीतियों का फैलना आरम्भ हो गया। इस कारण से भारतीय महिलाओं का सामाजिक जीवन व निजी जीवन दोनों ही कलुषित हो गए। इसके कारण महिलाएं चार दीवारी में कैद हो गयी। इस समय महिला की सुरक्षा का दायित्व पुरूष पर आ गया। इस कारण महिलाओं को पुरूष समाज में अबला, रमणी तथा भोग्या समझा जाने लगा। इसके साथ-साथ समाज में पुरुषप्रधान व्यवस्था का रूप लेने से बदलने लगा और समाज भी पुरुषप्रधान बनने लगा। इस पुरुषप्रधान व्यवस्था ने महिलाओं को निजी व सामाजिक स्तर पर पैर की जूती की उपाधि तक दे

[320] मनु स्मृति 2/35

डाली। महिलओं पर सामाजिक स्तर पर दो प्रकार से अत्याचार होते थे एक तो मुस्लि शासकों के द्वारा दूसरे उनके परिवार के पुरूषों के द्वारा अर्थात् पुरुषप्रधान व्यवस्था के कारण। मुस्लिम शासन काल में तो कुछ उच्च वर्ग की महिलओं को छाडेक़र लगभग समाज में महिलाओं की साक्षरता दर शून्य थी। इसलिए न तो वे घर से बाहर जा सकती थी और बाहर की सभा में पाना तो उनके सोच के दायरे से बाहर था। मुसमानों के लगभग 700 वर्षों के शासन के बाद भारत पर 200 वर्षों तक अंग्रेजों ने राज किया। इस समय तक तो महिलाओं को समाज में दोयम दर्जे का नागरिक समझा जाने लगा, अधिकार तो जैसे महिलाओं पास थे ही नहीं, अनमेल विवाह तो समाज में सामान्य रूप से होते थे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत ने 1100 वर्षो के गुलामी के कालखंड में महिलाओं की स्थिति बहुत ही दयनीय हो गयी थी। महिलाओं की सामाजिक समस्याओं को बहुत ही अच्छे गढ़ से महिला आत्मकथा लेखिकाओं ने उठाया है। वे स्वयं महिला होकर महिलाओं की स्थिति को अच्छी प्रकार से समझती है।

4.1.1 **पुरुषप्रधान समस्या**

हमारा भारतीय समाज बहुत से धर्मों, जातियों और समूह के संगम से निर्मित हुआ है। इस मसाज में व्याप्त अनेक वर्णों, जातियों व समूहों के अतिरक्ति एक और जाति भी है। वह जाति है - महिला या स्त्री की। आज हम 21वीं शताब्दी के दो दशकों को पार कर गए हैं फिर भी महिलओं को अनेक प्रकार के उत्पीड़न व विद्रोह का सामना करनापड़ रहा है। प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक महिला का सामाजिक कद पुरुषप्रधान व्यवस्था से निर्धारित करती आरही है। पितृसत्तात्ममक व्यवस्था के कारण ही आज महिलाओं को दो वर्गों में बांटा जा रहा है।

प्रथम- वह स्त्री जो देवी का रूप है, समाज में पुरुषप्रधान व्यवस्था द्वारा बनाएं गए नियमों व मापदंड़ों पर खरी उतरती है, पुरूष के आदेश को सिर झुकाकर मानती है, वह पतिव्रता, साधवी व सती है।

द्वितीय - द्वितीय वर्ग में उन महिलाओं को रखा गया है जो पुरुषप्रधान व्यवस्था के मापदंडों को आज नहीं मान रही और अपने स्वतंत्र निर्णय लेकर समाज में अपना उचित स्थान बनाना चाहती हे। इसी के परिणाम स्वरूप ऐसी स्त्रियों को बदचलन व्यभिचारिणी वेश्या, कुलटा, आदि संज्ञाओं से नवाजा जा रहा है। पुरुषप्रधान व्यवस्था में एक उक्ति बहुत प्रसिद्ध है - “त्रिया चरित्रं देवो न जानाति कुतो मनुष्य” ऐसी-ऐसी उक्तियों का प्रयोग कर पुरुषप्रधान व्यवस्था ने महिलाओं

के सम्मान व उनकी गरिमा को समाप्त कर दिया है। पुरुषप्रधान व्यवस्था अपने बल-प्रयोग से महिलाओं की ज्ञानेद्रियों पर राके लगाने का काम कर रही है। पुरुषप्रधान व्यव्सथा में महिला को केवल एक वासना शांत करने की कोठरी बना दिया है और महिला के शरीर पर पुरूष का एकाधिकार घोषित कर दिया है। पर बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण व्यवस्था है जिसमें पुरूष और महिला में से पुरूष को वरिष्ठ और महिला को कनिष्ठ माना गया है। अर्थात् समाज में महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की घोषित कर दी गई है। महिलाओं में पुरुषप्रधान व्यवस्था ने यह बातें बचपन से ही भर दी है कि पुरूष ही उसकी रक्षा करेगा। अजीत कोर अपनी आत्मकथा कूड़ा-कबाड़ में कहती है कि "शीला दाई ने पालने के पास जाकर मुझे गोद से उतार दिया और वह गुलाबी से गठरी धीरे से उठाकर मेरे सामने टिका दी, "तू बड़ी भाग्यशालिनी है री! यह तेरा वीर है। खूब प्यार करना इसे। इसके साथ खेलना। इसे राखी बाँधना। बड़ा होकर यही तो तेरी रक्षा करेगा, डोली में बिठाकर विदा करेगा[321]।" इस प्रकार बचपन से ही महिलाओं के मन में यह बात बैठा दी जाती है कि पुरूष ही उसकी रक्षा करेगा। बड़ी बहन की रक्षा उसका छोटा भाई करेगा यह कितनी हास्य पूर्ण बात है किंतु यही पुरुषप्रधान व्यवस्था की सच्चाई है। माता-पिता अपने लड़के-लड़कियों को आगे बढ़ाना चाहते हैं परन्तु पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उनके दिमाग में यह जहर भर दिया है कि लड़का, लड़की

[321] अजीत कौर, कूड़ा-कबाड़, पृ0 8

से श्रेष्ठ होता है, अगर परिवार में लड़का नहीं है तो कुछ भी नहीं है। माता-पिता लड़का-लड़की में बहुत फर्म करते है। इसको समझने पर लड़कियों के दिल पर क्या बितती होकगी। जब उनके माता-पिता अपने पुत्र को ज्यादा मळव देते है और उन्हें पराया धन मानते है। कौसलया बैसंती ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "फिर भी उस वक्त माँ-बाबा को लड़कियाँ ही है और लड़का सिर्फ एक ही है, इसका दुःख होता था। छः बहनों के बाद लड़का हुआ था, तब उन्होंने शक्कर बाँटी थी पूरे मुहल्ले में। पाँच वर्ष गणपति उत्सव मनाने का निश्चय हुआ। हमें माँ-बाबा प्यार जरूर करते थे, हमें पढ़ाने में कोई कसर नहीं छोडी फिर भी लड़के का महत्त्व उनके लिए ज्यादा था। हमें वे पराया धन समझते थे[322]" इस प्रकार लड़कियों के मन में यह बात बचपन से ही भर दी जाती है कि वे इस घर में स्थायी नहीं है यहाँ पर तो जो स्थायी है वह पुरूष है। हजारो सालों से अविरल गति से चली और ही पुरुषप्रधान व्यवस्था ने अपने बहाव में स्त्री को बहा दिया है। या उसे किनारे लगा दिया है। इस व्यवस्था ने में जो सर्वमान्य है वह है महिलाओं की अधीनता। महिलाओं को पुरुषप्रधान व्यव्सथा ने महज एक साधन माना है। पुरूष ने सदैव महिला के कार्य, उसकी जीवन शैली को अपने अनुसार साधने का काम किया है। उसने महिलाओं के लिए एक अलग से सामाजिक दायरा बना दिया है जो उसकी लगाम अपने हाथ में रखता है। महिला अपने जीवन में

[322] कौसल्या बैसंत्री, दोहरा अभिशाप, पृ0 51

क्या करना चाहती, कैसे करना चाहती है, इसका निर्णय वह स्वयं कर सकती है, परन्तु पुरुषप्रधान व्यवस्था ने न तो महिलओं को निर्णय का क्षेत्र दिया और नहीं अधिकार का। महिलाओं को इस पुरुषप्रधान व्यव्सथा ने ऐसी कोई भइ अधिकार नहीं दिया जो पुरूषों को परम्परा से मिलते आ रहे हैं। हमारे समाज की व्यवस्था ही कुछ इस प्रकार है कि पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उसे मजबूती से पकड़ा हुआ है। इस व्यवस्था ने महिला को पुरूष से हीन समझा है। देखा जाए तो स्त्री ही पुरूष को उत्पन्न करती है और पुरूष, स्त्री का अमर्यादित शोषण कर रहा है। पुरुषप्रधान व्यवस्था के विषय में केट मिलेट ने कहा है कि - "इन्होंने पुरुषप्रधान का अर्थ पिता की सत्ता से नहीं, बल्कि पुरूष की सत्ता से है। इसे वह सार्वभौम शक्ति संबंध और प्रभुत्व के रूप में चित्रित करती है। यह पूर्णतः प्रतिगामी सत्ता है। यह वर्गीय विभाजन में प्रवेश करती है। विभिन्न समाजों और विभिन्न ऐतिहासिक युगों में मिलती है। यह प्राथमिक तौर पर शोषक सत्त्ता है[323]।" इस प्रकार हमें पुरुषप्रधान व्यवस्था और पिता की सत्ता दोनों को अलग दृष्टि से देकर अध्ययन करने की आवश्यकता है। पुरुषप्रधान व्यवस्था पिता की सत्ता से भी ऊपर है। आज पिता अपने लड़े और लड़की के बीच जो अन्तर करता है वह पुरुषप्रधान व्यवस्था का परिणाम है। पुरुषप्रधान समस्याओं ने महिलाओं को चारों तरफ से घेर रखा है। वर्तमान महिला इस घेरे को तोड़कर अपनी स्वतन्त्रता और अपने अधिकार चाहती है किंतु कोई भी ऐसी बात जो इस व्यवस्था को चुनौती दे उसे

[323]जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह, कामुकता, प्रोर्नाग्रफी और स्त्रीवाद, पृ0 189, आनन्द प्रकाशन, कोलकता, 200

समाज के लिए खतरा मानकर पेश किया जाता है। डॉ. बिष्ट जगत सिंह ने कहा है कि - "स्त्री के शब्दों में - हम पुरूषों की विधि-विधान से बनाई हुई दुनिया में रह रहे हैं, अपनी विश्व दृष्टि का निर्माण उसी के अंतर्गत करते हैं। संसार के अर्थ, नाम पुरूषों द्वारा निर्धारित किय गये हैं। स्त्रियाँ ज्ञान और भाषा दोनों क्षेत्रों में बाहर रखी है[324]।" महिलाओं को भाषा व ज्ञान से वंचित रखने का कारण है कि अगर पढ़ गयी तो अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होगी, फिर पुरुषप्रधान व्यवस्था खतरे में आ जाएगी। पुरुषप्रधान व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह महिलाओं को अपने घर भी स्वतंत्र नहीं रहने देती। वहाँ पर भी कुछ भी करने से पहले पिता-भाई की इजाजत की आवश्यकता होती है। लड़कियों को अपने पिता के घर भी पिता के साथ-साथ अपने भाईयों से भी डर कर रहना पड़ता है। अगर कोई बात घर में ऐसी हो जाएजो लड़की कर दे और उसके भाई को पसंद ना हो तो वह अपनी बहन के साथ हाथापाई पर उतारू हो जाता है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा बचपन ने अखबार जोर पढ़ने के कारण अपने भाई से मार खाई वे कहती है। कि - "कन्हैया भाई कमरे से बाहर आकर बोले - "तू ये सब इतने जोर जोर से क्यों पढ़ रही है?" मैंने कहा, "मेरी मर्जी! इससे आपको क्या!" वह गुस्से से बोले, "नहीं यह तू मुझे सुना रही है। क्या मेरी बीबी मुझे मारेगी?" - और वह मेरे हाथ से अखबार छीनने लगा। मैंने अखबार अपने तरफ खींचते हुए कहा, "तुम

[324] डॉ० बिष्ट जगत सिंह, स्त्री विमर्श और मृणाल पाण्डे का साहित्य, पृ 88

क्यों चिढ़ते हो! “ और तो अखबार फट कर दो टुकड़े हो गया। मैं चीख-चीखकर रोने लगी, हर प्रसाद चाचा अब मुझ पर बिगड़ेगें उनका नया अखबार भैया ने फाड़ दिया।“ पूरा घर आँगन में जमा हो गया। जीजी ने भैया को समझाया। “पागल! अखबार में छपी चीज से क्या चिढ़ना! छोटी बहन से ऐसी हाथापाई करोगे[325]।“ लड़की की गलती न होने पर भी घर के बड़े व समाज के ठेकेदार लड़की की ही गलती निकालते हैं। क्योंकि उन सभी के विचारों को पुरुषप्रधान व्यवस्था ने बांध रखा है। इस प्रकार आज महिलाओं की सामाजिक समस्या में पुरुषप्रधान व्यवस्था सबसे प्रमुख है।

4.1.2 **भ्रूण हत्या**

हमारे देश में स्त्री को दुर्गा, देवी, लक्ष्मी, सरस्वती आदि मानकर उनकी पूजा की जाती है लेकिन हमारे देश में देवी समान कन्याओं को जन्म लेते ही मार दिया जाने का रिवाज बहुत पुराना है। प्राचीन समय में महिलाओं के गर्भ में लड़का लड़की जांच नहीं होती थी इसलिए जन्म बच्चे का जन्म होता तभी यह पता चलता की वह लड़का है या लड़की। जब लड़की का जन्म होता तो उस शिशु को दूध में डुबो कर या भरमल चटाकर मार दिया जाता था। ऐसा उच्च वर्ग में बहुत अधिक होता था।

[325] चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पिजंरे की मैं ना, पृ0 110-111

कन्या भ्रूण हत्या हमारे देश जब होने लगी जग कुछ दशकों पूर्व अल्ट्रसाउंड मशीन का प्रयोग चिकित्सा के क्षेत्र में होने लगा। इस मशीन का अवष्किार पश्चिम के वैज्ञानिकों ने इसलिए किया था कि माँ की गर्भ में पल रहे बच्चे में किसी प्रकार की कोई बिमीर हो तो उसका पता लगाकर उसका निवारण किया जा सके। हमारे देश में भी इसका प्रयोग इसीं उद्देश्य से करने के लिए लाया गया। किंतु यहाँ पर निजी डॉक्टरों द्वारा इसका प्रयोग गर्भ में लिंग जांच के लिए भी किया जाने लगा। डॉ जब गर्भ में लिंग की जाँच करके यह बता देता की गर्भ में लड़की है तो उसके माता-पिता उस भ्रुण को गर्भ में डाक्टरों के द्वारा मरवा देते। धीरे-धीरे यह बुराई समाज के निमन हस्तर पर पहुँच गई। इससे समाज में भ्रूण हत्या में बेहताशा वृद्धि हुई। कन्या भ्रूण हत्या की खबर समाज में फैलने पर भी समाज के ठेकेदार मुँह पर ताला लगाकर बैठे रहे क्योंकि वे सभी पुरुषप्रधान व्यवस्था के उत्तराधिकारी हैं। भारत अति गरीब तबके को छोड़कर मध्यम वग्र, निम्न मध्यम वर्ग, उच्च मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग में उस समय शायद ही कोई ऐसा परिवार हो जिसे बेटे की चाहत नहीं हो गर्भ में लिंग की जाँच नहीं करवाई हो। मनुष्य ने जैसे-जैसे वैज्ञानिक आविष्कारों को गति दी है वैसे-वैसे मानवता में बुराई के कार्यों ने भी गति पकड़ी है। कन्या भ्रूण हत्या एक व्यापार के रूप में उभर कर समाज के सामने आयी है। आज शहरों के साथ-साथ गाँवों में भी बहुत ही तीव्रगति से कन्या भ्रूण हत्या का व्यापार हो रहा है। आए दिन ऐसी खबरे सामने आती है कि डॉक्टर

को भ्रूण हत्या मामले में जेल, डॉक्टर भ्रूण हत्या करती पकड़ी गई या पैसों के लिए डॉक्टर भ्रुण हत्या कर रहा था।

पुरुषप्रधान सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं को हेय नज़र से देखा जाता है। इस व्यवस्था में महिलाओं को केवल उपभोग की वस्तु मात्र मानी जाती हे। यह मानसिकता लम्बे गुलामी के कालखण्ड का परिणाम है। गुलामी के समय में इस व्यवस्था की जड़े ओर मजबुत हो गयी। इसी कारण समाज में लड़के को ज्यादा महत्त्व दिया जाता है और कन्या गर्भ में ही भ्रुण हत्या कर दी जाती है। एक अन्य कारण भ्रुण हत्या का यह भी है कि जन्म से लड़की की तुलना भाई से करते हैं और माता-पिता द्वारा प्रदान की जाने वाली लगभग सभी सुविधाओं में लड़कियों के साथ भेद-भाव किया जाता है, शादी के समय और शादी के बाद मायके वालों की तरु से दहेज के लिए लड़की को तंग किया जाता है, अगर लड़की की शादी के बाद उसको लड़का न हो तो परिवार के लोग उसका जीना हराम कर देते हैं, परिवार व समाज पुरूष को कुछ नहीं कहता सभी गलतियां लड़की की ही निकालते हैं। एक कन्या के जन्म का उत्सव न उसकी माता करती है और नहीं उसका पिता। इस सोच के कारण भी भुरण हत्या के मामलों में वृद्धि हो रही है। भ्रुण हत्या के विषय में महिला आत्मकथाकारों ने बहुत ही कम लिखा है क्यांकि आत्मकथा समाज-कथा न होकर व्यक्गित कथा होती है। इसलिए भ्रूण हत्या संबंधी विषय हमें बहुत ही कम देखने को मिले है आत्मकथाओं में। किंतु रमणिका गुप्ता की आत्मकथा में लेखिका ने स्वयं कई बार एर्बोशन करवाया अर्थात अपने

गर्भ में पल रहे बच्चों की बहुत बार भ्रुण हत्या करवानी पड़ी । रमणिका गुप्ता के जैसे-जैसे रिश्ते बिगड़ते चले गए वैसे-वैसे रमणिका गुप्ता संवेदना हीन होती चली गयी अर्थात् उसमें संवेदना समाप्त हो रही थी। इस बीच उसे ऐसा लगता है कि उसके स्वप्न लुप्त हो रहे हैं। रमणिका गुप्ता अपने सपने पूरे करने के चक्र में अपना शरीरिक शोषण करवाने पर मजबूर होती है और वह बार-बार गर्भवती होती है प्रत्येक बार उसे एर्बोशन करवाना पड़ता। यहाँ रमणिका गुप्ता भ्रुण हत्या यह जाँच कर नहीं करवाती की उसके गर्भ में लड़की है या लड़का अपितु समाज के भय से करवाती है। इसके विषय में रमणिमका गुप्ता ने कहा है कि "माँ जिसका बनना कब गौरव बन जाता है और कब कलंक, यह स्त्री नहीं जानती। यह समाज के हाथ में है, पुरूष के हाथ में है चूंकि माँ देवी है या कुल्टा, इसकी मुहर पुरूष ही लगाता है, जो बाप कहलाता है। मैं माँ को सृजनशक्ति को बच्चा पैदा करने की क्षमता को गौरवमय मानती थी। किसने बीज डाला, यह मेरे लिए गौण था। मैंने खेत को बंजर रखने का फैसला लिया, फिर कोई विवाद नहीं होगा। फ़सल नहीं उगेगी तो मिल्कियत कैसी? जमीन है? धरती है, उस पर दावे करते रहें पुरूष! उन दावों से क्या होगा। धरती तो धरती है। वह अपने अस्तित्व के कारण है किसी मालिक या पुरूष के कारण धरती, धरती नहीं बनती। और भी किसी पुरूष के कारण और नहीं होती[326]।" रमणिका गुप्ता भ्रुण हत्या से तंग

[326] रमणिका गुप्ता, आहुदरी, पृ0 399

आकर अपनी बच्चेदानी ही निकलवा देती है। यह भ्रुण हत्या को एक भयावह तस्वीर प्रस्तुत कर रही है।

4.1.3 **अनमेल विवाह**

प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत ही अच्छी थी किंतु मध्यकाल तक आते-आते नारी को उसके अधिकारों से वंचित कर दिया गया। उसे किसी भी प्रकार का कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। उसको पढ़ाना है या नहीं यह उसके पिता पर निर्भर था। लड़की का विवाह किस उम्र में और किसके साथ करना है यह सब बातें उनके परिवार के पुरूष तय करते थे। लड़को को देखकर माता-पिता या दो परिवारों के कोई बीच का व्यक्ति तय कर देता था। जिसके साथ लड़की को अपनी सारी उम्र गुजारनी है उसके विषय में शादी से पहले लड़की को कुछ नहीं बताया जाता था। इस विषय में अजीत कौर कहती हैं कि - "उन्होंने कहा, "लड़के के एक महीने के लिए अमरीका जाना है। जब वापस आएगा, तब विवाह कर देंगे। महीने भर में उसके घरवाले भी और आप भी विवाह की तैयारी कर सकते हो।" दारजी मान गए फौरन| मानते क्यों नहीं, एक मुसीबत से यानी मुझसे छुटकारा मिल रहा था उन्हें लड़के के खानदान के बारे में, घर के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी ही मिली थी उन्हें। वह भी उस लड़के की कोई बहन, उनकी पुरानी मरीज थी उसके माध्यम से"[327]। भारतीय समाज में लड़की जैसे ही थोड़ी बड़ी हुई तभी से

[327] अजीत कौर, कूड़ा-कबाड़, पृ0 57

माता-पिता चाहते हैं कि उसकी शादी जल्द से जल्द कर दें फिर चाहे लड़का कैसा भी हो बड़ा हो या फिर कौन काम ना भी करता हो बस उसके पिता का काम अच्छा चल रहा हो। अनमेल विवाह हमारे समाज में बहुत सालों से हो रहे हैं। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण समाज के बड़े ठेकेदार भी मौन रहते हैं। वे लड़कों के खुशी के बारे में नहीं बिल्कुल भी नहीं सोचते। आज भी भारतीय समाज में लड़के को देखकर शादी नहीं की जाती अपितु परिवार को देखकर शादी की जाती हे। कहते हैं कि लड़की भूखी नहीं मरेगी। अनमेल विवाह के कारण पति-पत्नी की उम्र में बड़ अन्तर आ जाता है जिसके कारण पति जल्दी चल बसता है। वे लोग इस तरफ बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते। इसके साथ-साथ माता-पिता अपनी लड़की के मन में अपने कार्यो के द्वारा इतनी नफरत भर देते हैं कि वह चाहकर भी अपने मायके की समस्याओं को अपने माता-पिता को नहीं बताती। अजीत कौर कहती हैं कि "मौसाजी ने मेरी और देखा, जैसे कोई बात मुझसे छिपकर करना चाहते हों । वे उठ खड़े हुए "चलो, बहन जी के कमरे में चलते हैं[328]"। दारजी के चेहरे पर डर की रेखाएँ और गहरी हो गई। पहली बार मैंने दारजी के चेहरे पर डर की परछाई देखी। उनकी सूरत देखकर मुझे रहम आ रहा था। जीवन में पहल बार अहसास हुआ कि दारजी-बीजी के लिए मैंने जीवन-भर मुसीबतें ही खड़ी की हे। इस समय मैंने अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लिया कि

[328] अजीत कौर, कूड़ा-कबाड़, पृ0 59

चाहे कुछ भी हो जाए, मैं उनको और तकलीफ नहीं दूँगी। विवाह के बाद ससुराल वाले चाहे कितना भी तंग करें, मारें-पीटें मैं उन्हें भनक तक नहीं लगने दूँगी[329]।" माता-पिता का लड़की के प्रति ऐसा व्यवहार हो जाता है तो लड़की अपनी नियति मानकर किसी से भी, किसी भी परिवार में शादी करने को तैयार हो जाती है। यही कारण है कि हमारे समाज में अनमेल-विवाह बढ़ने का।

माता-पिता का मुख्य काम लड़की की शादी करने का होता है| वे अपनी बेटी की शादी उसके उम्र से दोगुने व्यक्ति से भी करने पर राजी हो जाते हैं। "क्यों, लड़की कहीं भागी जा रही थी? या बूढ़ी हो रही थी? यह तो पाकिस्तान बनने के कारण से बेचारी ने जल्दी-जल्दी बी॰ए॰ कर ली है तो मुश्किल से सोलह वर्ष की ही है। उतनी उम्र की लड़कियाँ तो गुड़डे-गुडियों से खेलती है। मौसा जी ने दारजी को बताया कि वे इस परिवार को अच्छे तरह जानते हैं। इस लड़के के भाई के साथ वे रोज ओबराय में ब्रिज खेलते हैं। लड़का 28 वर्ष का नहीं, 40 वर्ष का है। अखबार के नाम से वह विदेश से कई लाख रूपया इक्कठा करके लाया था जो वह खतम कर चुका है[330]। माता-पिता द्वारा लड़कों को पराया धन मानना सबसे सबड़ी गलती है वे यह भी नहीं देखते की शादी के बाद उनकी लड़की का भविष्य

[329] वहीं, पृ0 59

[330] वहीं, पृ0 60

कैसा होगा। क्या लड़की शादी के बाद खुश रह पाएगी। इस बात को बिना चिंता करते हुए वे लड़की का अनमेल विवाह करने पर राजी हो जाते हैं।

4.1.4 **महिला पर पुरूष का वर्चस्व**

भारत का संविधान विश्व का सबसे बड़ा लिखित संविधान है इसमें सभी व्यक्तियों को स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है। किसी भी नागरिक के साथ जाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता है। किन्तु वास्तव में जमीनी स्तर पर ऐसा नहीं है। पुरुषप्रधान व्यवस्था में पुरूष प्रधान समाज होता है। इसमें लिंग भेद के आधार पर महिलाओं को कम महत्त्व दिया जाता है और उन पर पुरूषों का अधिकार घोषित है। शताब्दियों से महिलाओं को पुरूष के द्वारा पैर की जूती समझा जा रहा है। समाज के निर्माण में पुरूष और महिला दोनों की समान आवश्यकता होती है फिर महिला पर व्यवहारिक स्तर पर पुरूष का वर्चस्व क्यों? 12वीं शताब्दी में भी शिक्षित महिला होने पर उस पर पुरूष वर्चस्व कायम है। पुरूष उसे आगोश से बाहर नहीं निकलने दे रहा।

समाज की स्थिति महिलाओं की दृष्टि से बड़ी हीन है। महिला की उम्र चाहे जो भी हो उस पर पुरूष का नियन्त्रण कायम है। बचपन में लड़की पर पिता का भाई का पूर्ण नियंत्रण होता है। अगर उसे घर से बाहर कही जाना हो तो उसे अपने पिता और भाई दोनों की आज्ञा की आवश्यकता होती है। पहले बात तो आज्ञा मिलती नहीं और मिलती भी है तो उसे साथ में घर का एक सदस्य जाएगा। घर में लड़की बड़ी है और उसका भाई छोटा है तो भी उसे उसका रक्षक बना बाहर

उसके साथ भेजा जाता है। अगर लड़की अपने गाँव, गली, मुहल्ले में भी अपनी किसी लड़की मित्र के घर जाती है तो उसके साथ उसका भाई जाता है। अगर गाँव से बाहर शहर जाती है तो उसके साथ पिता या उसके भाई में से एक साथ अवश्य जाएगा। इस प्रकार बचपन में उसके साथ पुरूष रूप में एक साया हमेशा साथ चलता है। लड़की अपने घर से सबाहर कोई होन पर भी नहीं जा पाती अगर घर के किसी काम से बाहर जाना हो तो या तो उसका भाई जाएगा या उसका पिता। लड़का जब रात को घर देरी से आता है तो उसके समाता-पिता उसे कुछ नहीं कहते और लड़की जब अपने स्कूल कॉलेज से दस मिनट भी देरी से आती है तो सवाल अर्जुन के तीरों के समान उस पर प्रहार करते है। जब लड़की बड़ी हो जाती है तो इस पर यह पहरा और भी कड़ा होता जाता है। जब लड़की की शादी हो जाती है तो अपने ससुराल चली जाती है तो वहाँ भी उसका पति उस पर अपने आदेश चलाता है। अगर वह पढ़ती है तो वह उसके साथ जाता है, अगर बाजार जाती है तो वह उसे साथ जाता है। इस प्रकार जब समय बितने के साथ-साथ वह माँ बन जाती है तो वह अपने बेटों पर आश्रित हो जाती है। इस प्रकार एक महिला को जीवन भर अपने ऊपर पुरूष वर्चस्व दिखाई देता है जैसे आमान सयभी प्राणियों पर है उसी प्रकार पुरूष का वर्चस्व सदैव स्त्री पर रहता है। इस बीच महिलाओ को सामाजिक और मानसिक रूप से भी सताया जाता है। लड़की को अपने मायके से दहेज लाने के लिए कहा जाता है। अगर वह नहीं लेकर आती है तो उसे शरीरिक रूप से पड़ताडित किया जाता है। इस सब यातनाओं से परेशान

होकर वे आत्महत्या जैसे कदम भी उठा लती है। बात यही समाप्त नहीं होती, पुरूष अपे वर्चस्व के कारण उसकी शिकयात भी थाने में नहीं लिखने देते क्योंकि वहाँ भी पुरुषप्रधान व्यवस्था को पौषक करने वाले बैठे हुए है, ऐसी ही एक सत्य घटना का वर्णन यहाँ करती हूँ - "जून को श्यामप्रसाद मुकर्जी महिला महाविद्यालय की अध्यापिका ने अपनी सहकर्मी अध्यापिका शंकुतला अरोड़ा की 5 जून को आग लगने से हुई मृत्यु के विरोध में दिल्ली में प्रदर्शन किया। शंकुतला ने अपने पति द्वारा की जाने वाली अपनी नियमित पिटाई से तंग आकर आत्महत्या कर ली थी। शिक्षिकाओं ने पुलिस आयुक्त बजरंग लाल के कार्यालय के समक्ष प्रदर्शन करके शंकुतला के पति सुभाष अरोड़ा के खिलाफ आत्महत्या के लिए मजबूर करने का मामला दर्ज करने की माँग की। सुभाष अरोड़ा दिल्ली के हंसराज कॉलेज में अध्यापक थे। हालांकि श्री बजरंग लाल ने उचित कार्यवाई का वादा किया। परन्तु शकुन्तला की मृत्यु की जाँच के लिए कोई कार्यवाही नहीं की गाई। 1 जुलाई के मध्य में पश्चिम दिल्ली के पुलिस उपायुक्त श्यामाप्रसाद मुखर्जी कॉलेज की अध्यापिकाओं से मिले और उन्हें बताया की सुभाष के विरूद्ध कोई मामला तब तक दर्ज नहीं किया जा सकता जब तक कि उसे किसी ने शंकुलता को मिट्टी के तेज का डिब्बा तथा माचिस देते हुए न देखा हो[331]।" इससे ज्यादा पुरूष वर्चस्व की महिलाओं के ऊपर और क्या कहानी हो सकती है। ऐसी तो लाखों कहानियाँ है। पुरुषप्रधान व्यवस्था की जड़े बहुत ही गहरी हैं वे औरत को किसी वस्त्र के

[331] स्त्री संघर्ष का इतिहास, 188-1900, राधा कुमार, पृ0 252-253, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2019

फटने का गम नहीं मनाते उसी प्रकार इस व्यवस्था औरत के मरने का गम भी नहीं मनाते। जब रमणिका गुप्ता की पहली माँ मर जाती है तो उसके पिता को बहुत गहरा दुःख होता है। इस विषय में लेखिका कहती है कि "पापा जी बहुत उदास रहने लगे थे। उन्हें अपनी पत्नी पर गर्व भी था और उससे प्यार भी। वे तभी से मेरी उस मां के विरह में कविताएं लिखेंगे थे। ताऊ जी पापा जी पर बिगड़ते और कहते थे, "क्यों रोते हो और के लिए? तुम हो तो मैं एक हजार औरतें ला दू तेरे लिए। औरत के लिए भी कोई मर्द कभी रोता है[332]?" इस प्रकार पुरूष को कोई फर्क नहीं पड़ता की उसकी महिला से उसका क्या संबंध है वह तो केवल उसके लिए नौकरानी या उपभाग की एक वस्तु मात्र है। अर्थात् पुरूष कभी भी महिलाओं को आगे नहीं बढ़ने देना चाहता। मन्नू भण्डारी व उसके पति राजन्द्र यादव दोनों ही प्रसिद्ध रचनाकार है वे अपनी रचनाओं के माध्यम से पाठकों के हृदय पर एक अमिट छाप छोड़ते हैं। किंतु फिर भी राजेन्द्र यादव पर केवल अपनी पत्नी के प्रति पुरुषवादी मानसिकता छाई रही । वे अपनी रचनाओं में तो पुरुषप्रधान व्यवस्था का विरोध करते रहे। मन्नू भण्डारी अपने पति राजेन्द्र यादव के विछारों से बहुत दुःखी होती है। राजेन्द्र यादव अपनी विवाह के बाद भी एक समानन्तर जीवन जीना चाहते है अर्थात् अपनी व्यक्तिगत आजादी चाहते हैं। वे कहते हैं कि "देखो, छत जरूर हमारी एक हेगी लेकिन जिंदगियाँ अपनी-अपनी होंगी, बिना एक

[332] रमणिका गुप्ता, आपहुदरी, पृ0 93

दूसरे की जिंदगी में हस्तक्षेप किए बिल्कुल स्वतंत्र, मुक्त और अलग[333]।" अपने पति से ऐसी बात सुनकर वह बड़ी दुःखी और चिंतित हो जाती है क्योंकि इससे पहले या शादी से पहले तो कभी कोई ऐसी बात नहीं हुई | नारी को केवल पुरूष ने अपने मनोरंजन का सामान माना है जब मन भर गया तो उसे छोड़ देते हैं। राजेन्द्र यादव भी मन्नू भण्डारी को उसकी बहन के साथ छोड़कर स्वयं मौज-मस्ती के लिए रानीखेत चले जाते हैं। मन्नू भण्डारी कहती हैं कि "बच्चे के जन्म से सम्बन्धित व्यवस्था ये नहीं कर सकते थे - मैं उसकी अपेक्षा भी नहीं करती थी, लेकिन वहले बच्चे को लेकर एक उत्साह, एक अपनत्व, भरे सरोकार की अपेक्षा तो मैं करती ही थी, लेकिन बच्चे के जन्म को वे मेरा काम और सुशीला की जिम्मेदारी समझकर मात्र तटस्थ ही नहीं रहे,बल्कि इस सबसे उदासीन भी रहे[334]।" इस प्रकार पुरूष चाहे कितना भी बड़ हो वह बारह तो महिला मुक्ति की बात करता है और अपनी पत्नी पर स्वंय का वर्चस्व कायम रखना चाहता है। वह चाहता है कि उसके घर की सभी औरतें आदर्शवादी हों।

4.1.5 **अधिकारों से वंचित**

महिलाओं को देवी मानने वाले देश में महिलाओं को उसके अधिकारों से वंचित रखाजा रहा है। बहुत से ऐसे क्षेत्र है जहाँ पर महिला कार्य में पुरूष से आगे है फिर भी अपने अधिकारों में पुरूष से पीछे हैं। भारतीय राजनेताओं में दृढ़ इच्छा

[333] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 56

[334] वहीं, पृ0 59

शक्ति का अभाव देखा गया है यहाँ पर कानून तो बना दिए जाते हैं पर उनका पालन नहीं किया जाता। अनेक कारणों के चलते आजाती के इतने वर्षों बाद तक महिलाओं को अपनी पैतृक सम्पत्ति में हिस नहीं दिया जाता था। आज भी हमारे देश में महिलाओं कोा उत्तराधिकारी होने से वंचित रखा जाता है। महिलाओं को एक अधिकार है वह है घर की रसोई का उसके अतिरिक्त सामाजिक स्तर पर महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार नहीं है। आज जब गाँवों में किसी भी विवाद या समस के लिए पंचायत होती है तो उसमें केवल पुरूष ही दिखायी पड़ते है। आगे बात आने की है अगर पंचायत महिलाओं के संबंध में किसी मुद्दे पर बात कर रही है तो भी उसमें महिलाएं नहीं होती।

भारतीय महिलाओं में जागरूकता व साक्षरता की भी बहुत कमी है। इसी कारण उन्हें अपने अधिकारों की जानकारी नहीं हो पाती। जब अधिकारों का ही पता नहीं होता तो वे कैसी कानूनी कार्यवाही कर सकती हैं। इसके साथ-साथ हमारे समाज में पुरुषप्रधान व्यवस्था व्याप्त है जिसके कारण भारतीय महिलाओं में डर बना रहता है। इसके कारण ही दूर जाती है और उन्हें अपने अधिकारेां से वंचित रखा जाता है। प्रभा खेतान प्रेम संबंधों को बहुत ही मानती है इसी कारण वह डॉ. सर्राफ के साथ अपने संबंध में बहुत गहरी आस्था रखते है। किंतु वह समाज के तानों को बर्दाशत नहीं कर पाती। इसके कारण उनका मानसिक संतुलन ठीक नहीं रहता है। इसी के परिणाम स्वरूप पर पांडिचेरी के अरविंद आश्रम में चली जाती है। परन्तु वहाँ पर भी डॉ. सर्राफ की यादें उसका पीछा नहीं छोड़तीं इन यों के कारण

ही उसे शांति नहीं मिली। इसी कारण वह श्री माँ के दर्शन करके वापस कलक्ता चली जाती हैं। कलकता पहुँच कर प्रभा खेतान तभी डॉ. सर्राफ से मिलती है और अपने अधिकार माँती है और कहती है कि "लुका-छुपी का यह खले मुझसे बर्दाशत नहीं होता, पार्क की बैंचों पर, झाड़ियों की ओट में किया गया प्यार, प्यार नहीं होता दिन के उजाले में आप मझे अपने साथ रखिए, अपने जीवन में स्थान दीजिए"

"मगर कैसे? तुम जानी हो मैं शादीशुदा हूँ।" "हाँ जानती हूं"
"बच्चों की जिम्मेदारियाँ हैं मुझ पर मैं इन्हें छोड़ नहीं सकता।"
"मैं कब कहती हूँ आप अपनी पत्नी को छोड़ दीजिए, मैं क्यां चाहूँगी आप बच्चों को न संभाले.....?"
"फिर तुम्हें.....?"
"क्या मुझे आपके परिवार में कोई कोना नहीं मिलेगा?"
"कैसी बाते करती हो।"
"हाँ मैं तो आपसे कुछ मांग नहीं रही, मुझे कुछ नहीं चाहिए, धन-दौलत, नाम-मुझे बस आपका साथ चाहिए[335]।" प्रभा खेतान डॉ. सर्राफ से इतना प्रेम करती है कि वह उसके नजदीक रहने के लिए तीन सौर रूपये महिने की नौकरी तक करती है। वह यह जानती है कि उसे आगे का रास्ता अकेले ही तय करना होगा। डॉ. सर्राफ उसे किसी भी प्रकार का कोई अधिकार नहीं देते हैं। गुड़िया भीतर गुड़िया आत्मकथा में मैत्रेयी पुष्पा ने महिला अधिकारों के संबंध में अपनी लेखनी को दृढ़

[335] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ0 98

किया है। अधिकार केवल कानूनी नहीं होते है। कानून में तो सब लिखा हुआ है पर यह पुरुषप्रधान व्यवस्था उन अधिकारों को धरातल पर उतरने नहीं देती। अर्थात् सामाजिक स्तर व पारिवारिक स्तर पर उन कानूनी अधिकारों का कोई महत्त्व नहीं होता है। मैत्रेयी पुष्पा जब नाचती है तो वह सोचती है यह यह उसका अधिकार है। परिवार व समाज को भी सोचना है सोचने दो। वह जीवन के पलों को जीना चाहती है। वह कहती है कि "मैं नाचने के लिए नहीं उठती थी, अपने हकों के लिए खड़ी हुई थी जिसने मेरी जिन्दगी के सम्मान का वास्ता था। मुझे प्रेरित करने के अपराध में वह घृणा के पात्र हो, मैं कल्पना नहीं कर सकती[336]।" आज भी स्त्री हर प्रकार के अधिकारों से वंचित है । महिला के वास्तव में पितृसत्तात्मक व्यवस्था में क्या अधिकार हैं। इस पर मैत्रेयी पुष्पा अपनी बेटियों से बात करते हुए कहती है "एक पत्नी का कर्तव्य अपने पति की सेवा करना उसके परिवार को वंश परम्परा को आगे बढ़ाना। इसके अतिरिक्त एक महिला के और कोई अधिकार है ही नहीं[337]"। महिलाओं के अधिकारों के विषय में मैत्रेयी पुष्पा ने कहा है कि "मेरा कितना मन था, अपनी बेटी को माँ के रूप में अपने नाम की पहचान कराने का मगर यहाँ भी स्कूल रजिस्टर की तरह तेरे डैडी ही कर्ता रहे। मैं सिरे से गायब, श्रीमती आर॰सी॰शर्मा के रूप में"[338]। मैत्रेयी पुष्पा को लगता है कि विवाह संस्था स्त्री के लिए सबसे बड़ी कैद है। जब एक स्त्री विवाह

[336] मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, पृ0 17
[337] वहीं पृ.सं.19
[338] वहीं, पृ0 131

के बंधन में बंध जाती है तो उसकी जिन्दगी से रंग पतझड़ की भाँति गायब हो जाते हैं। लेखिका महिला पराधीनता का दूसरा नाम विवाह को मानती है। वह अपनी पुत्री को भी विवाह न करने की सलाह देती हैं। उनका मानना है कि विवाह संस्था स्त्री के सारे अधिकार छीन लेती है। किंतु उसकी बेटी अपना गृहस्थ जीवन जीना चाहती है| आज लगभग सभी महिलाएं इस सामाजिक व्यवस्था के आगे अपने अधिकारों को तिरोहित कर चुकी हैं। ऐसा इसलिए की वे चाहती हैं कि उनकी गृहस्थ रूपी गाड़ी चलती रहे। वे कहती हैं कि "मेरी जिन्दगी की लय किसी मातमी जुलूस सी है जिसमें लोग बिना दाँए-बाएँ देखे बस सिर झुकाए चले जाते हैं । गुणवती बहू होना आसान नहीं होता, खून के आँसू रूलाता रहा मुझे[339]।" इस प्रकार एक महिला को हर कदम पर उसके अधिकारों से पुरूष ने वंचित करने का काम किया है।

4.1.6 **दोयम दर्जे का स्थान**

मानवता की दृष्टि से देखा जाएं तो यहाँ सभी मनुष्य है किंतु मारे सामाजिक व्यवस्था ने मुनष्य को विभाजन लिंग के आधार पर कर एक श्रेष्ठ ओर दूसरे को उससे निम्न दिखाने का काम किया है। समाज में पुरूष की स्थिति पहले स्थान पर है और महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की है। आज समाज में प्रत्येक स्थान, प्रत्येक क्षेत्र पर पुरूष का वर्चस्व है और प्रत्येक स्थान पर महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की मानी जाती है। महिला की रखवाली या हिफाजत पशुओं और खेत-

[339] वहीं, पृ0 131

खलिहान की तरह की जाती है। मालिक व मल्किगत के लिए भिन्न-भिन्न नियम जीवन बन गये। आज की महिला के पालनहार के रूप में समाज में पेश किया जाता है। एक महिला की खुशकिस्मती होती है कि वह पुरूष की सेवा करने के बाद महिला का भी वैसा ही हाल होता है जैसा की किसी बूढ़े पशु का होता है। शृंखला की कड़ियां में महादेवी वर्मा ने भी कहा है कि पशु-पक्षियों के समान मर्दों द्वारा औरत का पालन पोषण किया जाता है। इस प्रकार उसकी स्थिति पुरूष के सामने दोयम दर्जे की हो जाती है।

नासिरा शर्मा ने युद्ध की वापसी में लिखा है कि "एक तरफ कमायत के दिन मुरर्दों की पहचान मां के नाम से होगी, बाप के वंश वृक्ष से नहीं, फिर उसी औरत को आखिर प्रताडित कौन कर रहा है- सियासत, समाज, अज्ञानता" महिलाओं को प्रड़ताडित करके करने वे उसकी स्थिति समाज में दोयम दर्जे का करने का काम पुरुषप्रधान व्यवस्था ने किया है। वर्तमान समय में समाज में स्त्री की स्थिति दोयम दर्जे की है। मध्यकाल से ही पुरूष ने नारी की बुद्धि और मानसिकता पर सवालिया निशान लगाए रखा है। पुरूष ने महिला को सौन्दर्य की देवी, वासना शांत करने वाली प्राणी, बुद्धिहीन जीव के रूप में ही देखा है। इस समय महिलाएं अपनी सामाजिक स्थिति को लेकर बहुत अधिक व्याकुल है क्योंकि अब उन्होंने अपनी सामजिक पड़ताना को लिखकर समाज के सामने रख दिया। कुछ समाज की महिला प्रतिनिधियों ने साहित्य साधना के द्वारा अपने आप समाज में स्थापित करने की कोशिश की है। समाज में महिला की दोयम दर्जे की स्थिति पुरूष के

सामने हर प्रकार से है। पुरूष महिला को स्वयं के मुकाबले बुद्धिहीन, बलहीन, रागेहीन आदि मानकर उसे सदा पतन की और अग्रसित किय हौ। मन्नू भंडारी को बचपन में इसलिए पिता जी के प्यार से वंचित रहना पड़ा क्योंकि उसका रंग काला था। इसके कारण मन्नू भंडारी में हीन भावना उत्पन्न होने लगती है वे लिखती है कि "मैं काली हूँ बचपन में दुबली और मरियल भी थी। गोरा रंग पिता जी की कमजोरी थी सो बचपन में मुझसे दो साल बड़ी, खूब गौरी, स्वस्थ्य और हँसमुख बहन सुशीला से हर बात में तुलना और फिर उसकी प्रशंसा ने ही क्या मेरे भीतर ऐसे गहरे हीनभाव की ग्रन्थि पैदा कर दी की नाम, सम्मान और प्रतिष्ठा पाने के बावजूद आज तक मैं उससे उभर नहीं पाई[340]?" इस प्रकार समाज में महिला को हर प्रकार से पुरूषों के सामने दोयम दर्जे का साबित किया जाता है। महिलाओं की प्रतिभा को उबारने की उपेक्षा उसे हीन भावना से ग्रस्त कर दिया जाता है।

4.2 **आर्थिक समस्या**

हमारे देश में महिलाओं को आर्थिक रूप से बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। हमारे यहाँ नरी मुक्ति के संघर्ष का आरम्भ कब हुआ इसका अभी तक कुछ भी कोई निश्चित प्रमाण नहीं है। इसके सन्दर्भ में आशारानी ब्होरा का कहना है कि "भारतीय नारी का मुक्ति संघर्ष कहाँ से शुरू करें, इसके लिए कुछ निश्चित

[340] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 18

प्रमाण नहीं मिलते। इतना ही कहा जा सकता है कि उत्तर वैदिक काल में जैसे-जैसे बंधन क्रमशः कसते गये होंगे| उनसे मुक्ति की चाह भी वैसे-वैसे बलवती होती गई होगी पर कालांतर में रूप नारी समाज-नियंता नहीं रही, तो उसने अपनी स्थिति को अपनी नियति मान उसे लगभग स्वीकार ही कर लिय था। मध्यकाल से नवजागरण काल का इतिहास गवाह हैं[341]।" महिला आत्मकथाओं में महिलाएं स्वयं को आर्थिक रूप से मजबूत करने के लिए संघर्ष करती नजर आती हैं। आज विश्व 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर चुका है। फिर भी पुरूषों के मुकाबले महिलाओं कोा बहुत ज्यादा आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। रमणिका गुप्ता ने अपनी आत्मकथा हादसे में बिहार तथा बिहार से अलग हुए झारखंड राज्य में मिल मालिकों के बीच हुए खूनी संघर्ष का वर्णन किया है। इस संघर्ष का मुख्य कारण आर्थिक विषमता ही थी, देश की आजादी के इतने वर्षों बाद भी सामंतवादी प्रवृत्ति के माकि अपने मजदूरों व आम जनता को आर्थिक गुलामी समस्या के कारण उत्पन्न परिस्थितियों तथा परिवारिक विघटन का खुलकर वर्णन किया है। यह आर्थिक समस्या का ही परिणाम था कि 'खेतान हाऊस' गिरवी रखना पड़ा। इसी कारण मन्नू भण्डारी के पिता जी को इन्दौर से पलायन करके अपनों से अलग जीना पड़ा। आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए मन्नू भण्डारी को स्कूल में बहुत ही कम पैसे में नौकरी करनी पड़ी। आर्थिक समस्याएँ व्यक्ति को सबसे बड़ी समस्या होती है। इसी कारण व्यक्ति अपना इलाज भी नहीं करवा पाते हैं।

[341] आशारानी ब्होरा, भारतीय नारी दशा-दिशा, पृ0 18

सुशीला आर्थिक समस्याओं से घिर जाती है उसके पास इलाज के पैसों की कमी होती है जिसके कारण वह कई वर्षो तक बिस्तर से उठ नहीं पाती है। आर्थिक समस्याएं बहुत ही भयानक होती जो व्यक्ति को चारों तरफ से घेर लेती है। कहा जाता है कि जब जेब खाली होती है तो चलना बहुत मुश्किल हो जाता है।

4.2.1 **महिला बेरोजगारी**

मध्यकाल से ही महिलाओं ने पुरूषों के अधीन रहकर घर की चार दीवारी में चूल्हें में अपना सारा जीवन व्यतीत करती आई है। इसके पीछे मुख्य कारण है महिलाओं का अजपढ़ होना और आर्थिक रूप से समान न होना। अब जब 21वीं शताब्दी के दो दशक पार कर चुके है तो महिलाओं में साक्षरता दर बहुत बढ़ी है। जिसके कारण उन्हें अपने अधिकारों का पता चलने लगा है। परन्तु हमारे देश की राजनीति बहुत ही खराब है यहाँ शिक्षित होने पर भी व्यक्ति को रोजगार नहीं मिलता। जिसके कारण उन्हें बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है। हिन्दी की प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भण्डारी ने अपनी आत्मकथा में आर्थिक समस्याओं पर बहुत अधिक ध्यान दिया है। वह आर्थिक समस्याओं के साथ-साथ महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बी होने पर भी जोर देती हैं, कस्तूरी एक विधवा महिला है। उसके परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत ही खराब है। वह नौकरी की तालाश में है। किंतु पढ़ी नहीं है इसी कारण उसे पहले पढ़ना-लिखना सीखना होगा। कस्तूरी का जीवन कठिनाईयों से भरा हुआ है। वे कहती हैं कि - "गृहस्थी का नक्शा भी कैसा कमजोर है - स्त्री, बूढ़ा और बच्ची। पढ़ाई-लिखिाई के चलते घर और खेत का क्या हाल होगा? उजड़ती गृहस्थी और लुटते पैसों का किस्सा ऐसे ही समाप्त होने वाला नहीं। फिर रिवाजों ने भी यहाँ जिदंगी से कई गुणा बड़ी हैं। ससुर से संवाद ही

बहुत भारी पड़ रहा है।, जैसे उससे परम्परा उलट गयी हो[342]।" बेरोजगारी एक बहुत बड़ा अभिशाप है| जब व्यक्ति इसे दूर करने की कोशिश करता है विशेष रूप से महिलाएं तो उन्हें पुरुषप्रधान सामाजिक व्यवस्था के तानों का भी सामना करना पड़ता है। महिलाओं में जब पढ़ने के बाद बेरोजगारी रहती है तो इसका मुख्य कारण सरकारी नौकरी होती है। बेरोजगारी में संघर्ष की गति दूगुनी हो जाती है। व्यक्ति विकट से विकट परिस्थिति में भी काम करने को मजबूर हो जाता है। जैसे-जैसे दिन-प्रतिदिन भूमण्डलीकरण का दौर बढ़ता जा रहा है। राज्य उसे अपना रहे हैं। इसके कारण आंकड़े बताते है कि महिलाओं में बेरोजगारी की समस्या बहुत बड़ी है। इस विषय में प्रभा खेतान ने कहा है कि "बहुतेरे नारीवादी चिंतकों का कहना है कि आर्थिक परिवर्तन का मियाजा स्त्री वर्ग को भोगना पड़ा है। श्रमिक वर्ग के रूप में स्त्रियाँ बेकार हुई। देश के प्रायः सभी भागों में पुरूषों की तुलना में निजीकरण और पुनः संरचना का प्रभाव स्त्रियों को अधिक झेलना पड़ा, क्योंकि अब राज्य की कल्याणकारी भूमिका के अंतर्गत स्त्री को जो थेड़ी बहुत सुरक्षा और सुविधा आई थी स्त्रियाँ उससे वंचित होने लगी"[343]। आज निजीकरण को सरकारें बहुत तीव्र गति से बढ़ावा दे रही हैं। इससे काम सरकारी हाथों से निजी हाथों में जाता जा रहा है। इनमें काम करने वाली महिलाओं को रोजगार की समस्या और सुरक्षा की समस्या सामने आ रही है क्योंकि निजी

[342] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 33

[343] प्रभा खेतान, बाजार के बीच बाजार के खिलाफ, पृ0 60

कम्पनियों को अपने काम से मतलब होता है उन्हें महिलाओं से कोई सरोकार नहीं होता है। आर्थिक समस्याएं कितनी गम्भीर होती हैं, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि जब व्यक्ति इनमें पड़ता है तो वह इससे बाहर निकलने के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगा देता है। अगर वह अपने लक्ष्य में कामयाब होता है तो ठीक है और नहीं तो उसका सब कुछ बर्बाद हो जाता है। ऐसा लोग स्वयं के लिए कम और पारिवारिक जिम्मेदारियों के लिए ज्यादा करते हैं। इसी प्रकार कस्तूरी की आर्थिक समस्या के दलदल से निकलना चाहती है। इसके लिए वह बस्ता उठाकर स्कूल जाती है तो लोग उसे पागल कहते हैं। किंतु कस्तूरी को इस बात का भँली-भाँती पता था कि जब तक उसके आर्थिक समस्याएं दूर नहीं होती तब तक उसकी बच्ची का भविष्य अधंकार में ही रहेगा। अनेक रूकावटे आई कस्तूरी को अपनी पढ़ाई जारी रखने में पर वह लगातार पढ़ती रही। लेखिका कहती है कि "खेत और घर के नफा-नुकसान नजर अदांज कर डाले। नंगे पाँवों रास्ता नापती स्त्री को सारी दौलत किताब-कापियाँ हो गई, जिन की झोली लटकाए वह सूरज और चन्द्रमा के साथ समय की परिक्रमा करती रही और धरती के सारे दोषों से दूर होती जाती[344]"। समय का चक्र एक सा नहीं रहता। इसी कारण कस्तूरी के भाग्य ने भी अंगडाई ली और सफलता उसके कदमों में आ गई| आर्थिक समस्या का वास्तविक मर्म वही बता सकता है जो इस समस्या से दो-चार होकर गुजर चुका हो। आर्थिक समस्या का स्त्री के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण

[344] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बस

यह भी है कि निजीकरण के दौर में उसकी आर्थिक समस्या कितने दिनों तक टलेगी। क्योंकि आज के समय में जब मंदी आती है तो कम्पनियों में छंटनी होती है और लाखों लोगों की नौकरी चली जाती है। आज 2020 में कोरोना महामारी के कारण ऐसा बहुत ही देखने में आया है कि बड़े-बड़े विभागों न अपने यहाँ छटनी का कार्य किया है और लाखों लोगों के सामने आर्थिक समस्याएं खड़ी हो गयी हैं। इसी स्थिति पर प्रकाश डालते हुए प्रभा खेतान कहती है कि "स्त्री श्रम के संदर्भ में यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण मुद्दा स्त्री श्रम निर्भर कर रहा है। उस बाजार और पूँजी पर जिसके न कोई स्थानीय प्रतिष्ठता है और न लगाव। बाजार स्त्री को कोई दीर्घकालीन आश्वासन नहीं देता और नहीं वेतन और कीमत की कोई गारंटी। सब कुछ व्यापार चक्र पर निर्भर करता है। इस चक्र को चलाने वाला स्थानीय प्रबंधन भी नहीं कि उसे आरदायी माना जाए। मंदी के दौरान छँटनी अवश्यम्भावी है और गरीबी के बनने वाले नये गड्ढ़े समय के साथ गहरे होते जाते हैं[345]।" जीवन में सबसे अधिक महत्त्व अर्थ का है, जिसकी स्थिति आर्थिक रूप से ज्यादा अच्छी हो वह उतना ही अच्छा जीवन व समाज में उतना ही ऊँचा सम्भान पाता है। हिन्द के प्रसिद्ध साहित्यकार व उनकी पत्नी मन्नू भण्डारी पैसे की कमी के कारण अनेक वर्षों तक अकेले रहने को मजबूर हुए। 'अक्षर प्रकाशन' का किस्सा सारे साहित्य जगत में व्याप्त है कि किस प्रकार एक अच्छा चलता हुआ प्रकाशन पैसे के अभाव में आर्थिक मार झेलने पर मजबूर था। प्रकाशन के

[345] प्रभा खेतान, बाजार के बीच बाजार के खिलाफ, पृ0 71

लिए उधार लिए पैसे राजेन्द्र यादव अपने दोस्तों को लौटाने में असमर्थ दिखायी पड़ते हैं। आर्थिक स्थिति गिर जाने के कारण राजेन्द्र यादव किराये का मकान भी नहीं ले पाए। "राजेन्द्र के सामने समस्या थी कि वे इस समय कई संकटों से घिरे हुए थे। हंस के अस्तित्व का संकट तो था ही पर उससे भी बड़ा संकट था आर्थिक। ये इस स्थिति में नहीं थे कि किराये का मकान लेकर उसे चला सके तो अन्ततः रहने चले गये[346]।" इसी कारण जीवन यापन की पहली शर्त होती है पैसा। पैसे का काम तो पैसे से ही चलता है। जब पैसा पास नहीं होता तो व्यक्ति के सामने मरने-मारने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसी कारण मनुष्य रोजगार को सबसे ज्यादा महत्त्व देता है। कमजोर आर्थिक स्थिति मनुष्य को समाज में गर्दन झुका कर चलने पर मजबूर कर देती हे। यह वर्तमान समय में ही नहीं अपितु गुलामी के कालखण्ड में ऐसा ही था। पहल मुसलमान लगान के नाम पर भरी कर जनता पर लगाते थे। फिर अंग्रेजों ने तो मानो गरीब आदमी के मुँह से निवाला ही छीन लिया हो। अंग्रेजों के डर से समाज में व्याप्त डर बना रहता था। फसल चाहे हो या ना हो उन्हें तो लगान चाहिए। इसी कारण कस्तूरी के परिवार के सामने अर्थिक समस्या उत्पन्न हो गयी क्योंकि वे माल देने हालात में तो थे नहीं ऊपर से अंग्रेजों की मार का डर, इससे कस्तूरी के परिवार के सभी सदस्य बड़े ही भयभीत थे।" सबसे बड़ा और कड़ियल खर्च-सरकारी लगान है, कस्तूरी क्या जानती नहीं, इसी के कारण बाप भागे, इसी के कारण भाई भाग जाने की हालत

[346] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 173

में है। चाची कहती है सुरसा मुख लगान। जितनी जमीन नहीं, उतनी रकम[347]।" इस प्रकार समय चाहे जो भी रहा हो महिलाओं में बेरोजगारी सदा से ही व्यापत रही है।

4.2.2 **प्रत्यक्ष रूप से निर्णय लेने का अभाव**

महिलाओं को काफी शताब्दियों से पुरूष की यातना सहन करनी पड़ रही है। उसे घर से बाहर जाने की आजादी नहीं थी। किंतु समय के साथ वे अपने आपको साक्षर करने मे लग गई। आज महिलाओं को साक्षरता दर भी 70 प्रतिशत से अधिक है फिर भी उन्हें निर्णय लेने के लिए पुरूषों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। इसके पीछे मुख्य रूप से दो कारण हैः-

पहला कारण यह है कि शताब्दियों से चाहरदीवारी में कैद महिलाओं ने कभी कोई निर्णय नहीं लिया अब वह जब घर से बाहर निकली है तो उसे किसी भी कार्य के करने से पहले उसके बारे में उन्हें पुरूषों पर आश्रित होना पड़ता है। दूसरा कारण यह है कि वे समाज के नियमों में बंधी हुई है। जहाँ पर पुरूष ही सारे निर्णय लेते है और वे उन्हें निराश नहीं करना चाहती। इसलिए वे अपने निजी निर्णय भी पुरूष की सहमति से ही लेती है। मैत्रेयी पुष्पा अपनी अपनी आत्मकथा 'कस्तूरी मुडंल बसै' में कस्तूरी जब कुछ अपने जीवन में करना चाहती है तो उसे अपने भाईयों से पूछना पड़ता है पर वह और उसकी दोनों पूछ भी नहीं सकती। उन्हें लगता है कि अगर कोई भी फैसला उसके भाईयों की मर्जी के विरूद्ध लिया

[347] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 11

तो वे उन्हें मार डालेगें। मैत्रेयी पुष्पा कहती है कि - घर के कौने में शोरगुल जाल की शक्ल में उठा, उसे बाँघने लगा। माँ सामने खड़ी हो गई, अग्निवाण हाथ में नहीं था, माँ को जीभ पर था, छोड़ दिया- "तू अपने भाईयों को खेत की मूली समझ रही है? सिर काटकर धर देंगे और मैं तुझे बचा नहीं पाऊँगी, नादान। बाप नहीं तो क्या तू आजाद हो गई[348]?" महिलाओं में निर्णय न लेने की क्षमता इतनी कम है कि एक माँ अपने बच्चे डर से कोई निर्णय नहीं ले पा रही है। पहले वह अपने पति से डरती थी अब वह अपने लड़कों से डरती है। महिलाएं प्रत्यक्ष रूप से निर्णय इसलिए भी नहीं ले पाती हैं कि इस पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उसके अन्दर यह भाव भर दिए है कि पुरूष ही उनका भला कर सकता है। इस कारण वे अपने निर्णयों के लिए पुरूषों पर निर्भर रही है। परप्तु वास्तव में पुरूष कभी भी नहीं चाहता की महिलाएं उसे सआगे बढ़े। पुरूषों के द्वारा बनाए गए सामाजिक नियमों को तोड़ने का काम करें। पुरूष ने सदैव महिलाओं की प्रगति में बाधा बनने का काम करते है। पुरूष इस बात को अच्छी प्रकार से जानते है कि अगर महिलाएं उनसे आगे आ गई तो उनके वर्चस्व को खतरा उत्पन हो जाएगा। इसी मैत्रेयी पुष्पा ने आदमी के लिए कहा है - "आदमी स्त्री के लिए पथभ्रष्ट होता है"[349]। पुरूष ने हमेशा ऐसे ही कार्य किए हैं जो स्त्री को आगे बढ़ाने के नहीं अपितु उसे वहीं रखने के लिए। पुरूष उपर से तो दिखावा करता है कि वह महिलाओं को

[348] वहीं, पृ0 10

[349] वहीं, पृ0 21

आगे बढ़ाने का काम कर रहा है किन्तु अन्दर से वह उसे आगे बढ़ाना नहीं चाहता। इसी एहसास की पहचान जब महिलाओं को होने लगेगी तो वे अपने निर्णय स्वयं ले सकेंगी। महिलाओं के प्रति पुरूष का व्यवहार दोगला है वह उनके आगे कुछ और तथा पीछे से कुछ और होता है। इसी दोगलेपन का परिणाम है कि महिलाएं अपने फैसले स्वयं नहीं कर पाती। पुरूष ने कभी भी महिलाओं को समझदार और बुद्धिमान बनने ही नहीं दिया। पुरूष का मानना है कि बुद्धि वाले सारे काम केवल वह कर सकता है महिलाओं के यह बस की बात नहीं है। इसी कारण डॉ. सर्राफ प्रभा को सौन्दर्य की वस्तु कहते हैं बुद्धि की नहीं। डॉ. सर्राफ के मुख से ऐसे वचन सुनकर प्रभा खेतान हैरान हो जाती है। उसे लगता है कि जिसे वह इतना प्रेम करती है वह केवल उसे एक वस्तु समझता है। इस पर वे कहती है कि ''मैं एक औरत थी औरत के आर्थिक अवदान को नकारने की परम्परा रही है। पहले गृहस्थी में श्रम को समझ लेता है, या फिर उसे पर ढ़केल दिया जाता है पर आने वाले वक्त में औरत की सबसे बड़ी लड़ाईई इस मुख्यधारा में बने रहने की होगी[350]।'' इस प्रकार यह स्पष्ट से दिखाई पड़ता है कि अगर महिलाओं को अपनी अस्मिता को बचाना है तो वे पुरूष निर्भर रहना बंद कर दे। और स्वयं के निर्णय स्वयं लें अगर कोई निर्णय लिया आपने अपेन विषय में अगर उसमेंआप सफल रहे तो आपको सफलता मिली और अगर आप सफल नहीं हो पाई तो आपको अनुभव मिलेगा।

[350] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ0 107

4.2.3 **आय पर पुरूष का वर्चस्व**

आज जब समाज 21वीं शताब्दी में जी रहा है तो पुरूष को भी यह भाव को थोडा छोड़कर महिलाओं को अधिकार देने पड़े। कानूनी रूप से तो पुरूष और महिलाओं के अधिकार समान है परन्तु सामाजिक रूप से इनमें बहुत बड़ा अंतर है। महिला अगर नौकरी करती है तो उससे लाया गया पैसा अपने घर देती है और फिर अपनी जरूरत के हिसाब से अपने पिता या पति से मांगती है। कितनी कमाल की बात है पूरा महीना मेहनत करके जो वेतन मिला है वह ज्यों का त्यों अपने परिवार के पुरूष के हवाले कर देती है और यह अपना ही पैसा स्वयं की जरूरत के लिए उनसे मांगती है। पुरूष ने एक महिला की उस आय का कभी कोई हिसाब किताब ही लगाया जो वह शताब्दियों उसके साथ खेत में और घर की रसोई में अकेली काम करती रहीं घर में झाड़ू-पोछा, कपड़े धोना, पशुओं का काम, खेत का काम, खाने बनाने, बर्तन साफ करने आदि अनेक काम वह बिना किसी रूकावट के प्रतिदिन करती आई है। पुरूष ने सदा से ही उसकी मेहनत न मानकर उसे पालतु माना है। मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में जब असमय ही कस्तूरी की मृत्यु हो जाती है तो उसके घर में उसके ससूर के अतिरिक्त और कोई पुरूष नहीं बचता। देखा जाए तो कस्तूरी के तो कोई पुत्र था नहीं तो इस प्रकार उसके बाप दादा की सम्पति पर कानूनी रूप से मैत्रेयी का हक होना चाहिए। परन्तु इस सम्पति पर उसका मामा 'हेतराम' अपना हक समझता है जिस प्रकार से शताब्दियों से पुरूष समझता आया है। पुरुषप्रधान सोच के धनी कंस रूपी

हेतराम रात को अपनी बहन के घर से तम्बाकू और बैल को चुरा लेता है किन्तु पकड़ा जाता है और गांव वाले उसे मारते हैं। सम्पति के लिए हेतराम अपनी भांजी को भी मौत के घाट उतारने से भी नहीं हिचक रहा। मामा चाहता है कि उसकी भांजी की सारी आय व सम्पति उसकी हो जाए। वह अपनी भांजी की सम्पति पर बाज की तरह नजरें जमाए हुए है। जिस प्रकार से पुरूष हमेशा से ही करता आया है। यह कोई नई बात नहीं थी पुरूषों ने सदैव ही महिला और उसकी सम्पति दोनों पर अपना हक जताया है। बाबा बहुत ही दुःखी है हेतराम को लेकर उनके मन में डर बना हुआ है वे कस्तूरी से कहते हैं कि ''कस्तूरी, तुझे बुरा लगा होगा बेटी, मेरा इस तरह हक जताना अखरा होगा। पर मैं आज जब तरह से निहत्था हूँ, अपने पड़ोसियों से कहता हूँ कि वे सबसे ज्यादा नजदीक है, बूढ़े की कब आंखे मुंद जाए, यह भी हो सकता है। हमारी लाली (मैत्रेयी) को बड़ा खतरा है। जल्लाद हेतराम उसका टेटुंआ दबा सकता है, नदी में बहा सकता है। मुझे डर लगता है, क्योंकि जायदाद का लोभ बेरहम होता है[351]।'' इस प्रकार पुरूष ने हमेशा से ही महिला के पैसों व महिला के शरीर परर अपना हक समझा है। वह मानता है कि महिला जो कुछ भी कमा रही है या जो कुछ भी इसके पास है वह सब पुरूष का ही है। पुरूष ही महिला का स्वामी है।

4.2.4 **स्त्री की हर चीज पर पुरूष का वर्चस्व** –

[351] प्रभा खेतान अन्या से अनन्या पृ0 107

पुरूष ने हमेशा से ही स्त्री का शोषण किया है। स्त्री की प्रत्येक चीज का मालिक बनकर रहा है पुरूष। इसी के परिणाम स्वरूप पुरूष ने स्त्री को मनुष्य से वस्तु बना दिया। पुरूष उस पर हर प्रकार से अपना वर्चस्व बनाएं हुए है। पहले उस पर घर की चाहरदीवारी में शारीरिक व मानसिक रूप से प्रताड़ना करता था फिर जब स्त्री चाहरदीवारी से बाहर से निकली तो उसके वेतन पर, उसके काम के घंटे पर, उसकी कार्यकुशलता पर सब प्रकार से अपना वर्चस्व बनाए हुए हैं। 21वीं सदी में भी स्त्री के उपर पुरूष का वर्चस्व है इसी कारण प्रभा खेतान ने कहा है कि ‘‘लेकिन आज जो घट रहा है वह आशा के अनुरूप नहीं है। नयी आर्थिक नीतियों के कारण गरीब और गरीब होते जा रहे है। दलितों में स्त्री सबसे अधिक वंचित है। विकास के नाम पर स्त्री कभी विस्थापित होती है, तो कभी लैंगिक भेदभाव के कारण यौन-षोषण का सामना करती है। आधुनिकता के नाम पर उसे ठगने मे कोई पीछे नहीं रहता। स्त्री के लिए काम के घंटे अधिक हो गए है। यह एक प्रकार से यह एक अदृश्य कीमत है जिसे स्त्री चुका रही है। अर्थशास्त्री जिसे बढ़ी हुई कार्यकुशलता कहते हैं वह एक प्रकार से वैतनिक अर्थव्यवस्था की कीमत को अवैतनिक अर्थव्यवस्था की ओर स्थानांतरित करने की प्रक्रिया है[352]।’’ इस प्रकार एक स्त्री को पुरूष पता भी नहीं चलने देता की वह उसका शोषण कर रहा है या नहीं। वह उससे ज्यादा घंटे काम लेकर उसका शोषण करता है और उसे अपने वर्चस्व में रखने का पूरा प्रयास करता है। कार्य स्थल पर महिलाओं के साथ यौन-

[352] प्रभा खेतान, बाजार के बीच बाजार के खिलाफ, पृ0 82

उत्पीड़न की बात कोई नई बात नहीं है। पुरूष कभी नौकरी लगवाने के नाम पर तो कभी नौकरी बचाने के नाम पर महिलाओं से यौन-उत्पीड़न करता है। पुरूष ने सदैव महिलाओं की भावनाओं को रौंदने का काम किया है। पुरूष की नजर में जो सही है और पास जो है वह सब कुछ पुरूष का ही तो है। आज का समय भूमंडलीकरण का समय है इस समय भी आधुनिकता के नाम पर महिलाओं को शोषित किया जाता है। आज टीवी पर महिलाओं नग्न रूप में परोसा जा रहा है। उनकी देह दिखकर सामान बेचा जा रहा है। यह सब उच्च वर्ग में फैला हुआ है। सामान्य भारतीय स्त्री के जीवन पर इसका प्रभाव कम ही पड़ा है। प्रभा खेतान ने भूमंडलीकरण की नीतियों का भारतीय स्त्री के जीवन पर कमोबेश सीमित प्रभाव ही पड़ा है। वे अपने पारम्परिक चौखटे में ही कैद है। भविष्य में कुछ विशेष उन्नति होगी या उत्पादन के संसाधनों पर उनका नियंत्रण बढ़ेगा, ऐसा लगता नहीं। ऐसी कोई संभावना नजर नहीं आती जिसके आधार पर यह दावा किया जासके कि श्रम शक्ति का स्त्रीकरण हो रहा है। अस्सी और नब्बे के दशक में ग्रामीण इलाकों में कृषि के क्षेत्र में स्त्री श्रमिकों की संख्या 0.5 प्रतिशत ही बढ़ी काम खोजने वालों की कमी नहीं मगर काम है कहाँ[353]?'' जिस भूमंडलीकरण ने सबको स्वतंत्रता प्रदान की है क्या वह कभी महिलाओं को भी स्वतंत्रता देने का काम करेगा? क्या कभी महिलाओं पर से पुरूषों का वर्चस्व कम कर पाएगा? महिलाओं ने अपने आप को साबित करने के अनेक प्रयास किए हैं परन्तु वे इस

[353] वहीं, पृ0 98

पुरुषप्रधान व्यवस्था के सामने घुटने टेकने पर मजबूर हैं। इस व्यवस्था ने स्त्री को ऐसा उलझा रखा है कि वह किस तरफ से बाहर निकले उसे समझ नहीं आता। अगर स्त्री इस व्यवस्था से आर्थिक रूप से बाहर निकल रही है तो शारीरिक रूप से पुरूष उस पर अपना वर्चस्व बनाए हुए है। अगर किसी तरह से स्त्री आर्थिक व शारीरिक रूप से पुरूष से बचती है तो वह उसे सामाजिक स्तर पर घेर लेता है। इस प्रकार पुरूष से स्त्री की प्रत्येक चीज पर अपना अधिकार जमा रखा है। स्त्री चाहकर भी उसे मुक्त नहीं हो पा रही है।

4.2.5 **पारिवारिक सम्पति में सामाजिक रूप से हिस्सा न मिलना** -

महिलाओं को कानूनी रूप से पैतृक सम्पति मे हक हिन्दू उत्तराधिकार कानून 2005 में दिया है। इसके तहत परिवार में पिता के जितने बेटे-बेटियाँ उन सभी में सम्पति का बंटवार होगा। किन्तु यह बात सामाजिक रूप से अभी तक हमारे समाज में लागू नहीं हुई है। जब लड़की की शादी हो जाती है तो उससे कहा जाता है कि या तो आप अपनी जमीन अपने भाइयों के नाम करवा दो नहीं दो आपका आपके भाई से संबंध समाप्त। इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्रामीण क्षेत्र लगभग सभी लड़कियाँ अपनी जमीन अपने भाइयों के नाम ही कर देती है।

एक महिला का वास्तव में कोई घर नहीं होता और पुरुषप्रधान व्यवस्था में तो उसका कोई महत्त्व ही नहीं है। पिता उसे पराया धन समझ पालता है और ससुराल में वह दूसरे से आई हुई होती है। इस प्रकार न तो उसका मायका होता है और न ही उसका ससुराल। कानून चाहे जितने भी बने हो परन्तु वे समाज में लागू

नहीं होते। अगर किसी लड़की के साथ कोई लड़का शरारत करता है तो वह उसे कानून के द्वारा सजा दिलाना तो दूर उसकी शिकायत भी नहीं कर सकती। क्योंकि परिवार के सदस्य उस लड़के के परिवार से बाहर ही समझौता कहलेते हैं। जब उसे शिकायत का अधिकार ही नहीं है तो उसे जमीन का अधिकार समाज कैसे दे सकता है। समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत ही दयनीय है अगर देखा जाए तो उसके नाम तो कछ होता हीनहीं। उसके हिस्से आती है केवल जिम्मेदारियाँ और नफरत। एक लड़का बचपन से ही अपने पिता की सम्पति का रौब समाज में दिखाने लग जाता है। किन्तु लड़की ऐसा कभी भी नहीं कर सकती। इसके ही कारण है पहला कारण है उसे बचपन से सिखाया जाता है कि यह घर उसका नहीं है वह तो पराया धन होती है। दूसरा कारण है कि उसे पता चल जाता है कि उसके पिता के पास जो कुछ भी हो वह उसमें कोई हिस्सेदार नहीं है। जो भी उसके पिता का है वह सब उसके भाइयों का है। इसी कारण वह बचपन से अपने पिता के घर नौकरानी की तरह कार्य करती है। और जवानी में अपने पति के घर काम करती है। उसे घर की मालिक कहा जाता है पर उसके नाम सुई की नोंक समान जमीन भी नहीं होती। महिला को सामाजिक स्तर पर कुछ नहीं मिलता उसे कुछ चाहिए तो उसे समाज से पहले लड़ना पड़ेगा। किन्तु समाज बहुत ही रूढ़ियों से ग्रस्त है। वह सामाजिक रूप से पिता की सम्पति में लड़की को हिस्सा देने के लिए कभी-भी राजी नहीं हो सकता। इस विषय में रमणिका गुप्ता कहती है कि ‘‘तो क्या में उजाला हासिल कर सकती हूँ? मैं खुद से सवाल

कर खुद ही उत्तर देती पहले इस अंधेरे से तो जूझा! इस व्यापार मंडली से पीछा छुडाओ? तुम तो खुद शतरजं का मोहरा बनती जा रही हो? तुम क्या पलटगे बिसात? अरे नहीं? तुम तो खुद ही बिसात बन गई? तुम पर शर्तें बदलते हैं लोग! मोहरे चलते हैं! प्यादा बादशाह, रानी सबके सब तुम्हारी ही देह पर दांव लगाते है! आखिर क्या हो तुम[354]?'' इस प्रकार सामाजिक रूप से एक महिला यह समझ नहीं पाती की वह क्या है? क्योंकि समाज महिला के साथ उसके बचपन से ही बुरा व्यवहार करने लगता है और उसके जीवन के अंत उसे ऐसा बना देता है कि उसका कोई फर्क नहीं पड़ता कि किसने, कब और क्यों उसके साथ इतने अत्याचार किए? जब महिला कानून का सहारा लेकर अपना हक मांगने की बात करती है, तो लोग उसका सामाजिक बहिष्कार करने लग जाते हैं। और उसे बदचलन घोषित करते है। उसके चरित्र को सामाजिक रूप से पूर्णतः धूमिल कर दिया जाता है। रमणिका गुप्ता इन सब बातों को बहुत अच्छी प्रकार से जानती है। इसी कारण वह कहती है कि ''जीना तो अकेले ही पड़ेगा अब चूंकि फैसला किया है तुमने घर जाने का मतलब हार मानना या अपमानित होकर प्रकाश के पास लौटना होगा[355]।'' इस प्रकार से एक महिला को अकेले ही जीवन यापन

[354] रमणिका गुप्ता, आप हुदरी, पृ0 288

[355] वहीं, पृ0 285

करना पड़ता है। आज 21वीं शताब्दी में भी महिलाएं अपने सामाजिक अधिकारों से वंचित है।

4.3 **धार्मिक समस्या** -

भारतीय संस्कृति में धर्म का महत्त्व बहुत अधिक है। हमारे यहाँ पर धर्म जीवन में समाया हुआ है। धर्म के द्वारा जीवन को सही रास्ता दिखाने का काम किया जाता है। हमारे यहा धर्म का सम्बन्ध सत्य से हाता है। धर्म को सद्मार्ग कहा जाता है। जो भी मार्ग सत्य को जाता है वही धर्म का मार्ग होता है। सनातन धर्म विश्व का सबसे प्राचीन धर्म है। उसी कारण इस धर्म को विश्व में सर्वश्रेष्ठ धर्म माना जाता है। इसमें सभी के कल्याण की कामना की जाती है। भारत के प्रत्येक जनमानस को धर्म प्रिय रहा है। धर्म के माध्यम से ही मनुष्य को सदाचार, सहिष्णु और नीति की शिक्षा दी जाती है। धर्म में सबसे महत्त्वपूर्ण विश्वास, आस्था, प्रेम और श्रद्धा होते हैं। जब मनुष्य के जीवन संकट आ जाते हैं तो धर्म उसे नैतिक बल प्रदान करने का काम करता है। सनातन धर्म का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य के जीवन को सुखी बनाना होता है। हिन्दू धर्म कभी भी द्वैष भावना व अनैतिक कार्यों की शिक्षा नहीं देता। धर्म को शांति का र्माग तथा अध्यात्म का मार्ग भी कहा जाता है। मनुष्य के अन्दर व्याप्त अहं भावना को समाप्त करने का कार्य ध्धर्म ही करता है। धर्म मनुष्य को विनम्र व सहनशील बनाता है। इस विषय में डॉ. चेतना राजपूत ने कहा है कि ‘‘धर्म में श्रद्धा-विश्वास के साथ अपने से बड़ी किसी सत्ता को आगे, चाहे वह ईश्वर हो, चाहे तीर्थकर हो, चाहे वह धर्म या संघ हो और चाहे मानवता हो, नमनशील बनना पड़ता है।’’ धर्म ही मनुष्य को जीवन में आगे बढ़ाने का कार्य करता है। धर्म ही शिक्षा का मूल माना जाता

या प्राचीन समय में। समय के साथ-साथ अनेक धर्म अस्तित्व में आने लगे और धर्मों में कट्टरता आने लगी। धर्म अपने मूल शिक्षा को भूलकर कट्टरता के रास्ते पर चलने लगा है। आज लगभग सभी धर्म अपनी सुविधा के अनुसार अपने आप को परिभाषित करने लगे है। आज धर्म की परिभाषा को तोड़-मरोड़ कर पेश किया जा रहा है। आज धर्म में राजनीति का प्रवेश होता जा रहा है। आज धर्म और राजनीति राजपथ पर कदम ताल कर रहे है। धर्म के सामने आज समाज में आज बदल रहे हैं। समाज में धर्म के नाम पर वोटों का आकलन किया जाता है। राजनीति का रंग जब धर्म की कट्टरता का आवरण ओढ़ लेता है तो वह बहुत ज्यादा खतरनाक हो जाती है, अगर देखा जाए तो धर्म व्यक्ति के लिए होना चाहिए परन्तु जब व्यक्ति धर्म के लिए होने लगता है तो समस्या आरम्भ हो जाती है। मांस में पैगम्बर का कार्टून बनाए जाने पर किस प्रकार से एक शिक्षक की हत्या कर दी गई यह धार्मिक कट्टरता का ही परिणाम है। आज समाज में धर्म और जाति के नाम पर प्रेमी-प्रेमिकाओं की मौत के घाट उतार दिया जाता है। अपनी आत्मकथा आपहूदरी में रमणिका गप्ुता जाति के बारे में कहते हैं कि ‘‘जोटों की लड़की की क्षत्रियों के घर कैसे शादी का सकती है भला? बीबी जी तरफ से जहर खाने की धमकियाँ और दूसरों की मिसाले घर में दी जाने लगी थी। मंझला भैया परेशान! भाभी बजाय सहारा देने के ताने कसती[356]।’’ आज समाज को आगे बढ़ने की जरूरत है वहीं हमारा समाज जाति में अटका हुआ है।

[356] रमणिका गुप्ता, आपहुदरी, पृ0 48

महिलाओं को धर्म के नाम पर समाज में शोषित किया जाता है। उसेके कारण उन्हें काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। जब एक महिला किसी धार्मिक स्थल पर नहीं जाना चाहती तो समाज उसे घृणित दृष्टि से देखता है। इसी प्रकार की एक घटना मन्नू भण्डारी के साथ घटित होती है जब वे उज्जैन में प्रेमचंद निर्देशक थी फिर भी उनका मन कभी महाकालेश्वर जाने का नहीं हुआ। वे कहती है कि ‘‘मैं नास्तिक नहीं हूँ, गहरी आस्था है मेरी भगवान में। पर उसके बावजूद मंदिरों या तीर्थ स्थानों में जाने में मेरी कोई रूचि नहीं न संस्कार। इसलिए बार-बार के आगह्र के बाद भी मैं ने जब महाकालेश्वर के मंदिर जाने में कोई उत्सुकता नहीं दिखाई तो उन लोगों को निराशा से ज्यादा आश्चर्य हो रहा था[357]।’’ पुरुषप्रधान व्यवस्था में धर्म स्त्री के संघर्ष के रास्ते में कभी बाधा तो कभी सहारा बना हैं। धर्म के नाम पर महिलाओं को गुलाम बनाने में पुरूषों का भी बहुत महत्त्वपूर्ण हाथ है। हमारे समाज में धार्मिक मान्यताएँ बिना किसी प्रश्न के पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती है। इन मान्यताओं के पालन का भार महिलाओं पर ही होता है। इन मान्यताओं के नाम पर स्त्री को जकड़ दिया जाता है। मैत्रेयी पुष्पा लिखती है कि ‘‘बेटियाँ बाप-भाईयों की मर्यादा और आबरू हर हालत में रखती आई है। डोली में कहाँ बैठना था, लड़कियाँ जानती हैं। कस्तूरी लड़कियों जैसी लड़की है| इस हुकुम, इस सलाह की ताकत समझती है। इस परम्परा के उल्लंघन से जिन्दगी भारी

[357] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 182

पड़ती है[358]।'' इस प्रकार देखा जाए तो धार्मिक बेड़ियों की जकड़ बहुत मजबूत है स्त्रियों के पैरों में।

4.3.1 **अंधविश्वास** -

भगवान के प्रति अपना समर्पण व श्रद्धा प्रकट करने के लिए मनुष्य बहुत से कार्य करता है जिससे उसे लगता है कि वह भगवान की भक्ति कर रहा है। भगवान की भक्ति को आध्यात्मिक शांति का मार्ग भी कहा जाता है। इसके मनुष्य उपवास, तीर्थ, व्रत पूजा आदि अनेक प्रकार की धार्मिक मान्यताओं का पालन करता है। जब तक मनुष्य सच्चे मन से ईश्वर की भक्ति करता है तो ठीक किन्तु जब वह दिखावा करता है तो वह भक्ति आडम्बर में बदल जाती है। वह भक्ति के नाम पर अंधविश्वासों को फैलाने का काम करता है। क्योंकि किसी भी धाम्रिक परम्परा का जन्म अनुकरण अंध रूप से होने लगता है तो वह अंधविश्वास की रेखा को पार कर जाती है। अंधविश्वास के नाम पर महिलाओं के साथ यौन-शोषण, जादू-टोना, भूत-प्रेत, बलि देना आदि अनेक प्रकार के कार्य किए जाते है। अंधविश्वास के नाम पर बच्चों की बलि तक दे दी जाती है। मराठी लेखिका सरिता वाकलकर ने अंधविश्वास के परिणाम स्वरूप अपना घर बार छोड़ना पड़ा था। वे कहती है कि ''वह तुरंत नासिक गया और रात के बारह बजे शमशान में जाकर मन्त्र जाप किया तब उसके ध्यान में आया कि दादा की चाची के घर बनवाते समय नींव में सिंदूर लगाया हुआ पत्थर मंत्र फूंककर रखा है। इस कारण

[358] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 20

इस घर की वंश वृद्धि नहीं होगी। घर बेच कर हमारा परिवार दूसरी जगह रहने लगेगा तभी यह दोष दूर हो सकता है[359]।'' इस प्रकार अंधविश्वास के नाम पर लोगों के पैतृक मकानों को भी छोड़कर जाने को मजबूर होना पड़ता है। अंधविश्वास हिन्दू धर्म में ही नहीं अपितु सभी धर्मों में व्याप्त है। मुस्लिम धर्म में मन्नत मांगना, बकरे की बलि देना, कुराणखानी, मरे हुए व्यक्ति पर चादर चढ़ाना आदि अनेक अंधविश्वास फैले हुए हैं। इन अंधविश्वासों के कारण गरीब व्यक्ति पर भी भार बहुत बढ़ जाता है। बहुत बार मुस्लिम फकीर या कोई ढ़ोगी व्यक्ति ऐसी विधि बता देते हैं कि उससे गरीब व्यक्ति को कर्जे में डूबना पड़ता है। जो व्यक्ति ऐसे कार्य करता है उसे ही पता होता है कि उसके कितना पैसा लगा अन्य लोगों तो उसे धार्मिक कहने में लग जाते हैं। ऐसे अधार्मिक कार्यो को धर्म का नाम दिया जाता है। इनको करने वाले की आर्थिक, मानसिक व शारीरिक स्थिति का क्षरण होता हहै। अगर वह यह पैसा, समय किसी अच्छे कार्य में खर्च करें तो उसकी आत्मा को आनन्द मिलता है। आज समाज में बकरा ईद के नाम पर करोड़ों पशुओं की बलि दी जाती है। जिस दिन बकरा ईद होती है उस दिन मुस्लिम बल्लियों की गलियों में रक्त पानी की तरह बहता हुआ दिखाई देता है। हमारे समाज को अंधविश्वासों की कोई सीमा नहीं है। मैत्रेयी पुष्पा के सामने भी सती होने जैसे प्रथाओं के प्रश्न आने लगे थे जिस सती प्रथा पर 1829 ई. में रोक लग गयी थी वह प्रथा भी लेखिका की शादी से पहले उसकी चाची ने उसे बता

[359] सरिता वाकलकर, जैकपाट, पृ0 118

दी। मैत्रेयी पुष्पा लिखती है कि ‘‘वह बूढ़ा है बीमार है, कब तक जिएगा? जो वर बूढ़ा है, मुझे पता चल गया है। और तू भी जानती है कि पति की चिता पर बैठकर जिन्दा जल मरने वाली औरत को लोग पूजते हैं। जिन्दा रही तो जीते जी मार डालेगें। चाची, मैंने रेशम कुंवर सती की किताब पढ़ी है[360]।’’ बीसवीं शताब्दी में भी समाज में ऐसे अंधविश्वास व्याप्त है जो सरकार ने बहुत पहले कानून बनाकर बंद कर दिए थे। भारतीय समाज में रहने वाला शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसके घर पर कुछ ना कुछ अंधविश्वास की मान्यता ना हो। इन अंधविश्वासों से ज्यादा प्रभावित महिलाएं हाती है। ऐसी प्रथाएं पीढ़ी दर पीढ़ी चलती आ रही है। मनुष्य इन अंधविश्वासों के भंवर जाल में फंसकर बहुत बार ऐसा कर देता है जो उसे समाज में बैठने लायक नहीं छोड़ता। इन अंधविश्वास के चक्र में ज्यादातर महिलाएं ही आती है और वे सोचती तो अपने फायदे का है। परन्तु हो उनके विपरीत जाता है। महिला आत्मकथाओं में लेखिकाओं ने समाज में व्याप्त वे अंधविश्वासों जिनमें महिलाएं सबसे प्रभावित होती है और जो अंधविश्वास उनके स्वयं के जीवन में आए उनके बारे में उन्होंने विस्तार से चर्चा की है। इन अंधविश्वासों के परिणाम स्वरूप किसी मौलवी, फकीर आदि के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को ज्यादा अपने चंगुल में फंसाया जाता है। ऐसे मौलवी, फकीर महिलाओं के साथ शारीरिक संबंध भी करते है। ऐसी घटनाएं हम समाचारों में आए दिन पढ़ते और सुनते है। बहुत बार इस अंधविश्वास के कारण

[360] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 10-11

मनुष्य या बच्चे की जान भी चली जाती है। इस प्रकार इन अंधविश्वासों का विरोध सामाजिक स्तर पर बड़े पैमाने पर होना चाहिए और समाज को जागरूक बनाने का काम करें।

4.3.2. **व्रत, उपवास का पाखण्ड** -

भारतीय संस्कृति को व्रतों की संस्कृति भी कहा जाता है। हमारे यहाँ पर जितने व्रत व उपवास किए जाते है दुनिया की किसी भी संस्कृति में नहीं किए जाते। हमारी संस्कृति उत्सव प्रिय संस्कृति है। हमारे यहाँ होली व्रत, सत्यनारायण व्रत, मगं लवार, शनिवार, सोमवार, शुक्रवार, करवाचौथ व्रत, छठ व्रत आदि अनेक ऐसे व्रत उपवास है जो यहां पर महिलाओं के द्वारा किए जाते है। पुरूष में भी व्रत उपवास की परम्परा है। हमारे देश में पुरूष मुख्य रूप से मंगलवार या शनिवार का उपवास रखते हैं। हमारी संस्कृति वास्तव में, वैज्ञानिक संस्कृति है। विज्ञान कहता है कि सप्ताह में एक दिन उपवास रखने से शरीर स्वस्थ रहता है। यही हमारे ऋषि-मुनियों ने बताया। परन्तु समय के साथ-साथ इन व्रतों व उपवासों को धर्म से जोड़ दिया जाता है। इसी कारण इन उपवासों व व्रतों को पाखण्ड कहा जाने लगा। यह व्रत या उपवास सबसे ज्यादा महिलाएं करती है। समाज में एक पाखण्ड व्याप्त है कि अगर कन्या सोलह सोमवार करती है तो उसे अच्छा वर मिलता है। इन व्रतों का वर से कोई संबंध नहीं होता। ऐसे व्रतों से धर्म के प्रति श्रद्धा तो बढ़ती है पर इनका परिणाम कुछ नहीं होता। आज जब मैं यह अध्याय लिख दूं तो आज भी एक व्रत है लगभग सारे उत्तर भारत में और विदेश में रह

रहे भारतीयों के द्वारा बड़े चाव से किया जाता है। यह व्रत है करवाचौथ का। इस व्रत को शादी शूदा औरतें अपने पति की लम्बी आयु के लिए रखती है। इसमें पूरा महिलाएं न तो अन्न का दाना लेती है और न ही जल पीती है। इस व्रत से पहले दिन महिलाएं अपने हाथ-पैरों में मेंहदी लगवाती है और व्रत वाले दिन वे नवोढ़ा की तरह श्रृंगार करती हैं। दिन में कहानी सुनती हैं और रात को चांद को देखकर तथा अपने पति के हाथ से पानी पीकर अपना व्रत खोलती है। प्रसिद्ध महिला लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने अपने करवाचौथ रखने का वर्णन अपनी आत्मकथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में किया है। वे कहती है कि - ''करवाचौथ का त्योहार था| हम सब हिन्दू स्त्रियाँ व्रत में थी। पंजाब की औरतों ने सबेरे सरगी खायी थी। हमारे यू.पी. में उसका चलन नहीं। निर्जल निराहार रहने से पुण्य ज्यादा मिलता है, ऐसा कहा जाता है। मैं ज्यादा से ज्यादा पुण्य लूटने के लिए गर्ग के पास कहानी सुनने गई थी। औरतों ने पांवों में महावर लगाया, मांग भरी और नई बिंदी लगाई। डॉ. रेखा अगव्राल भी पूरी निष्ठा के साथ उपवास पर थी। सुहाग के श्रृंगार में उन्होंने नई चूड़ियाँ पहनी[361]।'' जैसे-जैसे समय बदलता गया वैसे-वैसे लेखिका ने जाना और अपने विचारों में परिवर्तन किया। वे स्वयं तो इस बात समझी और अन्य महिलाओं को भी जागरूक करने का प्रयास किया की इस व्रत के करने से कोई पति की उम्र नहीं बढ़ती। यह समाज में व्याप्त एक पाखण्ड है। सह पुरुषप्रधान व्यवस्था की समृद्धि का प्रतीक है। यह व्रत साबित करता है कि

[361] मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, पृ0 62

पुरुषप्रधान व्यवस्था की जड़े बहुत गहरी है और वे महिलाओं को दबा कर रखना चाहते हैं। मैत्रेयी पुष्पा इस बात को अच्छी प्रकार से समझ गयी थी कि इसको करने से कोई लम्बी उम्र या पुण्य नहीं मिलने वाला वे कहती है कि ''भूखे रहकर ही प्रेम दिखेगा क्या ? यह करवाचौथ जैसे त्योहार हमारे वफादार होने की कसौटी है? पतिव्रता का लाइसंेस प्रदान करने वाले ये त्योहार, लोकाचार .... जिनके द्वारा हमारा सतीत्व हर साल रिन्यू होना है। मोहिता ने कहा था, चन्द्रमा क्या है मम्मी? ककड़-पत्थर भरा कोई उबड़-खाबड़ मैदान।[362]'' हमारी संस्कृति में ऐसे व्रत और उपहास है जो महिला को करने पड़ते है। कभी पति की लम्बी उम्र के लिए तो भी अपने बच्चों की लम्बी उम्र के लिए। अगर समाज में कोई महिला इन व्रतों को नहीं करती है तो उसे पतिव्रता होने पर सवालिया निशान लगा दिए जाते हैं। इनको न करने पर स्त्री पर किसी का प्रकोप भी हो सकता है ऐसी पाखंडी बातें भी बताई जाती है। इन व्रतों को पढ़ी-लिखी औरतें भी करती है। अब तो इन व्रतों को महिलाएं बड़े शान से करती हैं क्योंकि इस दिन उनके पति बाजार से कोई उपहार उनके लिए लेकर जाते हैं। इन व्रत व उपवासों के कारण समाज में पाखण्ड को बढ़ावा मिलता है। आज का युग विज्ञान का युग है इस युग में मनुष्य ने अपने आगे बढ़ने व समाज को गति देने का काम करना चाहिए न की पाखण्ड फैलाने का। अनेक महिला आत्मकथाकारों ने महिलाओं पर थोपे गए इन व्रत

---

[362] वहीं, पृ0 245

उपवासों के प्रति महिलाओं को जागरूक कर उन्हें इनका त्याग करने के लिए कहा है।

4.3.3. **स्त्री देवी का रूप** -

विश्व की सबसे महान् संस्कृति सनातन संस्कृति में सबसे अधिक महत्त्व स्त्री का है। भारतीय संस्कृति को स्त्री से भिन्न करके नहीं देखा जा सकता। हमारे धर्माचार्य बताते हैं कि समाज व संस्कृति के गठन में महिलाओं का योगदान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। हमारे धर्मग्रंथों में भी स्त्री का स्थान सबसे ऊँचा बताया गया है। स्त्री को जननी, गृहलक्ष्मी, अन्नपूर्णा आदि उपाधियों से नवाजा गया है। वैदिक समय में महिलाओं का समाज में बहुत ऊँचा स्थान था। महिलाओं को अपनी स्वेच्छा से शिक्षा पाने, वर चुनने का अधिकार था। हिन्दू संस्कृति व विश्व के महान ग्रंथों में शामिल मनुस्मृति में घर, परिवार, दाम्पत्य जीवन की सुख-समृद्धि, उन्नति और विकास के लिए महिलाओं की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण व आवश्यक है। स्त्रियों के प्रति सम्मान की भावना व उसके सम्मान में देवताओं का सम्मान होने की बात भी कही गयी है।

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता

यत्रेतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफल क्रिया।।[363]"

एक महिला को अर्धांगिनी भी कहा जाता है। क्योंकि वह पुरूष के प्रत्येक कार्य में भागीदार होती है। महिला, परिवार में, समाज मे, धार्मिक कार्यों में, जीवन पथ पर

[363] डॉ० ठाकुर विजयसिंह, निर्मल वर्मा के साहित्य में नारी, पृ0 96

आदि पर वह पुरूष के साथ रहती है। जो अधिकार पुरूषों के पास है वे सभी अधिकार उसके पास भी है। विश्व की प्राचीन महिलाएं जैसे गार्गी, अनुसया, सावित्री, सीता, आदि का इतिहास बहुत ही गौरवपूर्ण व समृद्धशाली रहा है। परन्तु मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति निम्न होती चली गयी अब महिलाओं को एक याचक के रूप में देखा जाने लगा।

सामंती युग में सारी वैदिक परम्पराएं बदल गयी अब महिलाओं को उनके सभी अधिकारों से वंचित कर दिया गया। महिलाओं को केवल वासना की दृष्टि से देखा जाने लगा। मुसलमानों के आक्रमण ने तो महिलाओं की स्थिति को और भी भयावह बना दिया। मुसलमानों के आक्रमण के बाद महिलाओं के साथ सामुहिक बलात्कार, उनको घर से जबरदस्ती उठाकर ले जाने की बातें तो सामान्य थी। इसके कारण महिलाओं में अने कुरूतियों का प्रवेश हुआ जैसे पर्दाप्रथा, बाल विवाह, सतीप्रथा आदि। महिलाओं को अब मात्र भोग की वस्तु माना जाने लगा। महिलाओं को अब पूर्णरूप से पुरूष पर निर्भर बना दिया इसके विश्व में प्रसद्धि कवयित्री महादेवी वर्मा कहती है कि ‘‘नारी शून्य के समान पुरूष के ईकाई के साथ सब कुछ है परन्तु उससे रहित कुछ भी नहीं[364]।’’ पुरुषप्रधान व्यवस्था ने महिलाओं को देवी कहकर उसे हीन व कमजोर बना दिया। अब वह दया के पात्र के रूप में देखी जाने लगी। पुरूष ने कभी भी महिलाओं को सशक्त होने का अवसर नहीं दिया। पुरूष ने एक तरफ तो महिलाओं को देवी तथा दूसरी तरफ उन्हें भोग की

[364] महादेवी वर्मा, शृंखला की कडियाँ, पृ0 26

वस्तु माना है। इतिहासकार डोनाल्डसन का कहना है कि ‘‘पुरूष नर मनुष्य है और स्त्री मादा मनुष्य। लेकिन मनोविश्लेषकों ने पुरूष को मनुष्य और स्त्री को केवल मादा माना और कहा कि जब भी स्त्री मनुष्य की तरह व्यवहार करती है उसे पुरूषों की नकल की कौशिश बता दिया जाता है[365]।’’ इस प्रकार उसे नारी के चोले से बाहर नहीं आने दिया जाता है। आज की जो महिला है उसका यह रूप एक लम्बे संघर्ष का परिणाम है। इस स्थिति में आने के लिए अनेक बार समाज के रूप व महिला पुरूषों के संबंधों के स्वरूप में बदलाव आया है। पुरुषप्रधान व्यवस्था में प्राचीन समय से लेकर वर्तमान तक महिलाओं के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया या लिखा गया वह सब पुरूष द्वारा कहा गया और लिखा गया। इस संदर्भ में डॉ. शीला राजपाल ने कहा है कि ‘‘परम्परागत मानसिकता ने नारी को देवी और दानवी दो भागों में बांट दिया है। कहीं उसने गुणों को देखकर देवी तो कहीं दोषों को देखकर दानवी कहकर भर्त्सना की गई। किन्तु वास्तविकता यह है कि न तो वह देवी है न दानवी। वह मानवी है उसमें दया, माया, ममता, विश्वास है[366]।’’ पुरूषों ने कभी भी महिलाओं को समान नजर से नहीं देखा अपितु पुरूषों ने अपने को सर्वोच्च दिखाने के लिए महिलाओं को हीन साबित करने की कौशिश लगातार की है। पुरूषों ने स्त्री को गुलाम बनाने के लिए उस पर अनेक प्रकार के धार्मिक व सांस्कृतिक उतरदायित्व स्थापित कर दिए। महिला को कभी भी एक

[365] सम्पादक राजकिशोर, स्त्री परम्परा और आधुनिकता, पृ0 23

[366] डॉ० ठाकुर विजयसिंह, निर्मल वर्मा के साहित्य में नारी, पृ0 92 46

मनुष्य के रूप में नहीं देखा गया। महिलाओं को केवल मात्र भोग का सामान समझा गया। इस विषय में कहा गया है कि ‘‘संसार में स्त्रियों ने कभी अपना इतिहास रचा नहीं। अपने लिए आचार संहिताएं नहीं बनाई। जो कुछ उन्हें विरासत में मिला है वह पुरूष समाज का ही दिया हुआ है। इसलिए मर्जी आई जिसे चाहे देवी बनाया, जिसे चाहे वेश्या[367]।’’ इस प्रकार से पितृसत्तात्म्क व्यवस्था ने स्त्री को अपनी मर्जी से जैसा चाहा वैसा बनाने का प्रयास किया समाज में स्त्री को स्थिति याचक जैसी रहे इसका प्रयास पुरूष ने सदा ही किया है और कर रहा है।

4.3.4 **रिश्तों में बंधी हुई** -

हमारे समाज अगर रिश्तों की बेड़ियों में अगर किसी को सबसे ज्यादा बांधा जाता है तो वह है स्त्री। स्त्री को रिश्तों के बंधन में ऐसा जकड़ दिया जाता है कि वह अपने व अपने भविष्य के बारे में कुछ भी नहीं सोच सकती। जब लड़की अपने पिता के घर होती है तो उसके एक पुत्री, एक बहन होने नाते उस पर हमेशा पहरा होता है। उसे कहा जाता है कि अपने पिता और अपने भाई की इज्जत तेरे हाथ में है। इस इज्जत के नाम पर उसे चारदीवारी में बंद रहना पड़ता है। उसे पढ़ाने के लिए अपने गांव से दूर नहीं भेजा जाता है। इसका कारण है कि पुरुषप्रधान व्यवस्था में स्त्री के उपर पुरूष को बिल्कुल भी विश्वास नहीं होता है लड़की को रिश्तों के बंधन में ऐसा जकड़ दिया जाता है कि अगर उसे अपने घर से बाहर भेजा जाता है तो उसके पिता, या उसके भाई उसके साथ जाते हैं। अगर पिता,

---

[367] वहीं, पृ0 95

पुत्र में से कोई एक साथ नहीं जा पाता है तो उसकी माता को उसको साथ भेजा जाता है। पता नहीं लड़की को अकेला क्यों नहीं भेजा जाता। शायद पुरुषप्रधान व्यवस्था में पुरूष की इज्जत इतनी सस्ती है कि उसे हमेशा डर बना रजता है। जब लड़की की शादी कर दी जाती है तो उसका सारा संसार और जीवन पूर्ण रूप से बदल जाता है। उसे अपने पिता के घर के सभी तौर तरीके, अपनी पसंद, नापसंद, अपने आदि सब कुछ त्यागकर अपने पति के घर के रंग में रंगने पर मजबूर होना पड़ता है। उसे अपने ससुराल में अपने पति, सास, ससुर, देवर, जेठ, जेठानी, ननद आदि व्यक्तियों की सेवा में समर्पित होना पड़ता है। इस विषय में डॉ. गणेश दास ने कहा है कि ''उसमें इतना परिवर्तन पाकर ही शायद कहा जाता है कि उसका दूसरा जन्म कभी वरदान भी होता है। तो कभी शाप स्वरूप भी[368]।'' अपने परिवार व रिश्तों को जोड़े रखने के लिए एक स्त्री को पत्नी, बहु, माता, भाभी, देवरानी, जेठानी, सास आदि अनेक रूपों को एक साथ लेकर चलना पड़ता है। जब परिवार में किसी भी प्रकार का कोई लड़ाईई-झगड़ या तनाव होता है तो उस स्थिति में स्त्री को ही समन्वय करना पड़ता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में पुरूष के मुकाबले एक स्त्री जिम्मेदारी बडी़ अच्छे प्रकार से निभा सकती है। इसके कारण इन रिश्तों में बंधकर एक स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व लगभग समाप्त ही हो जाता है। इसी कारण स्त्री को परिवार की आंतरिक व्यवस्था का आधार भी कहा

[368] डॉ० गणेश दास, स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में नारी के विविध रूप, पृ0 56

जाता है। महिलाओं की आत्मकथाओं को पढ़कर ऐसा लगता है कि अगर उनके पांवों को रिश्तों की बेड़ियों ने न बांधा होता तो वे अपने लक्ष्य बहुत ही कम समय में प्राप्त कर लेती। किन्तु ऐसा है नहीं। एक स्त्री को अपने रिश्तों के बचाने के लिए परिवार के साथ-साथ आर्थिक मामलों को भी देखना पड़ता है और अपने जीवन को और भी ज्यादा मुश्किल में डाल लेती है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने अपने परिवार को आर्थिक संकट से उबारने के लिए बहुत ज्यादा संघर्ष करना पड़ा। वे सुबह 10 बजे से 1 बजे तक नौकरी पर जाती उसके पश्चात् ट्यूशन लेने का काम करती और घ रपर अपेन परिवार को संभालती। उनका कहना है कि अब मेरी दिनचर्या थी - अंधेरे पांच बजे उठकर दो अंगीठियां जलाना, सभी लिए बेड़ टी देना फिर भोजन बनाने में जुट जाती। बीच बीच में कुंतल को दूध पीला आती। उसके टट्टी पेशाब के लंगोट बदल आती। फिर बस एक गनीमत थी स्वराज्य और बालुपुर नन्हीं बच्ची को खिलाते रहते थे। साढ़े नौ बजे तक परोठों का नाश्ता करके तीनों भाई अपना अपना टिफिन संभालकर दफ्तर चल देते इसके बाद ही मुझे होश आता। आधे घंटे में तैयार होकर स्कूल पहुंचना होना था[369]।''

इस प्रकार एक महिला को रिश्तों की बेड़ियों में डालकर उसका अपना अस्तित्व और भविष्य दोनों को बंद कर दिया जाता है। रिश्तों को जोड़े रखते-रख्ते वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व भूला देती है। इन रिश्तों के कारण उसके सामने धूमिल हो जाते है।

---

[369] चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पिंजरे की मैं ना, पृ0 212-213

4.3.5 **धार्मिक रूप में शोषण** -

पुरुषप्रधान व्यवस्था के कारण स्त्री को अपने अस्तित्व को बचाने के लिए अनेक संघर्ष करने पड़ रहे है। इन सभी संघर्षों के मध्य धर्म भी साथ-साथ चलता है। स्त्री का धार्मिक रूप से भी पुरुषप्रधान व्यवस्था में शोषण होता है। हमारी संस्कृति में धार्मिक परम्पराएं बिना किसी तर्क के पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होती रहती है। इन सभी परम्पराओं के पालन के रूप में स्त्री का बहुत अधिक शोषण होता है। धर्म के नाम पर भारतीय समाज में जितना शोषण स्त्री का होता है पुरूष का उसके मुकाबले एक प्रतिशत भी नहीं होता। घर की चौखट के बाहर ही रंग-बिरंगी दुनिया पुरूष की और घर के अन्दर की चौखट का संसार स्त्री के हिस्से आता है। समाज में व्याप्त जितनी भी धार्मिक मान्यताएँ है उनका पालन कभी परिवार की समृद्धि के नाम पर कभी पति की लम्बी आयु के नाम पर कभी बच्चों की लम्बी आयु के नाम स्त्री को ही करना पड़ता है। अगर कोई महिला पुरुषप्रधान व्यवस्था के सारे कानून मानती हैं। तो उसे पतिव्रता स्त्री कहा जाता है और अगर वह नहीं मानती है तो इसे कूलटा, बदचलन आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। महिलाओं को कभी शर्म के नाम पर, कभी चरित्र के नाम पर, कभी संस्कारों के नाम पर हमेशा दबाया जाता रहा है। मैत्रेयी पुष्पा कहती है कि ‘‘स्त्रियों का खेमा अलग ही था, जिसको किसी जाति की दरकार नहीं उनका अपना कुछ अगर है तो वह है लज्जा, शर्म, लिहाज-आदर, मान-मर्यादा, रीति और परम्पराओं का निर्वाह औरतों की दुनिया ज्यों की त्यों है। मैत्रेयी ने औरत होकर जन्म लिया लज्जाशील

औरत के सांचे में ढ़ाली जा रही है? वह तो अपने आप को मनुष्य का मूल रूप नारी समझ रही थी जैसे मनुष्य मूल रूप पुरूष होता है[370]।'' आज स्त्री को पुरुषप्रधान व्यवस्था ने अंधविश्वासी, पाखंडी बना दिया है इससे वह चाहकर भी निकल नहीं पाती। आज स्त्री को देववादी बना दिया है वह जब भी कोई अपनी बात पुरूषों के सामने रखती है तो उसे उसके भाग्य में लिखा बताकर उसे चुप करवा देते है। धार्मिकता का मुखौटा पहनाकर स्त्री का शोषण शताब्दियों से होता आ रहा है। भारतीय समाज में स्त्री को एक रूढ़िवादी तत्त्व के रूप में स्थापित किया गया है। सभी प्रकार की परम्परागत रूढ़ियों का पालन करने के लिए स्त्री काके मजबूर किया जाता रहा है। इससे निकलना स्त्री के लिए मुश्किल हो गया है।

21वीं शताब्दी में आज का समाज प्रवेश कर चुका है। जहां स्त्री ने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक आदि क्षेत्रों में बहुत उन्नति की है वहीं अनेक रूढ़िवादी प्र'न भी उसके सामने खड़े हैं। इतनी प्रगति करने के बाद भी आज स्त्री धर्म की जंजीरों में जकड़ी हुई है। मैत्रेयी पुष्पा ने इस विषय में कहा है कि - ''औरतों को चिड़ियों की तरह किसी भी डाल पर, किसी पेड़ पर, किसी बाग में मनमानी जगह नहीं मिला करती। उनका जीवन चिडियों जैसा सरल नहीं होता। मनुष्य के रूप में अगर सबसे कठिन, चुनौती भरी जिन्दगी को पाया है तो स्त्री

[370] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बैस, पृ0 100-101

ने या कुदरत को ही उससे बैर था? या कि सृष्टि के कर्ता-धर्ता की ही कोई साजिश। मादा बनाने के बाद मादा होने की सजा का नाम औरत कर दिया। क्योंकि साथ में दिमाग दिल और विवेक भी दे दिया[371]।''

स्त्री को धर्म के नाम पर मायके में पिता व भाई की आज्ञा का पालन करना पड़ता है और शादी के बाद मुझे अपने ससुराल में धर्म के नाम पर सभी की सेवा और सभी की चाकरी करनी पड़ती है। स्त्री के प्रत्येक कर्म को पुरुषप्रधान व्यवस्था में धर्म से जोड़ दिया जाता है। ''जिस प्रकार से मायके की ऊँच-नीच को मर्यादा बद्ध रखना कन्या का धर्म है उसी तरह बहू के रूप में ससुराल के लिए चारों और संतुलन बनाये रखना उसी कन्या का पवित्र कर्म है?'' इस प्रकार से समाज में स्त्री को धार्मिक रूप से खुब शोषित किया जाता है[372]। स्त्री को धर्म से जोड़कर एक प्रकार से पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उसे अपना दास बना लिया है।

4.4 **राजनीतिक समस्याएँ**

समाज का निर्माण पुरूष और महिलाओं के संयोग से होता है इसी कारण समाज में पुरूष और महिलाओं की जननी लगभग समान है परन्तु अपनी जनंसख्या के अनुसा महिलाओं को राजनीति में उतना प्रतिनधित्व नहीं दिया गया है। अगर हम सीधे तौर पर देखते है तो आधी आबादी का नेतृत्व करने वाली आज भी

---

[371] वहीं, पृ0 309

[372] चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पिंजरे की मैं ना, पृ0 268

अपना उचित स्थान राजनीति में नहीं दिया गया है। पुरूष ने औरत को केवल एक वस्तु के रूप देखा है और वैसा ही उसका प्रयोग करने की सोचता है। यह पुरुषप्रधान राजनीति का बहुत बड़ा सत्य है। इसी कारण स्त्री राजनैतिक दृष्टि से पुरूषों से पीछे रह गयी। जब महिलाओं ने देखा की पुरूष उन्हें किसी भी मुख्यधारा में शामिल नहीं करेगा इसलिए इन्होंने इस सत्ता से टकराकरने की सोची। इसी कारण पहले अपनी राजनीतिक समस्याओं को उठाने का प्रयास कुछ पढ़ी लिखी लेखिकाओं ने किया फिर उन सभी प्रयासों का वर्णन अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। जिसका प्रभाव स्त्री पर भी देखा गया। महिलाओं आत्मकथाकारों में कुछ तो ऐसी थी जिन्होंने भारत विभाजन का दंश भी झेला था। प्रसिद्ध पंजाबी लेखिका अमृता प्रीतम ने विभाजन की स्थितियों का वर्णन अपनी आत्मकथा में करते हुए कहा है कि ''1947 में देश के विभाजन के समय भी देखा। सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक मूल्य कांच के बरतनों की भांति टूट गए थे और उनकी किरचें लोगों के पैरों में बिछी हुई थी। ये किरचें मेरे पैरों में भी चुभती थी और मेरे मन में भी[373]''| जो दर्द पैरों के साथ माथे को जख्म दे दे वह दर्द कितना भयानक होता होगा। इसी प्रकार मन्नू भण्डारी ने स्वतंत्रता के समय काफी संघर्ष किया। इनके पिता के घर राजनीति से संबध रखने वाले लोगों का आना जाना हमेशा रहता था। इन सबके के प्रभाव मेंमन्नू लोगों में जोश भरने के लिए भाषण भी देती थ्ज्ञी। वे कहती है कि ''सन् 1946-

[373] अमृता प्रितम, रसीदी टिकट, पृ0 17

47 के वे दिन .... वे स्थितियाँ उनमें वैसे भी घर में बैठे रहना संभव था भला? प्रभात फेरियां, हडतालें, जुलूस भाषण हर शहर का चरित्र था, और पूरे दमखम और जोश-खरोश के साथ इन सबसे जुडना हर युवा का उन्माद[374]।'' स्वतंत्रता आन्दोलन में अनेक समस्याओं का सामना महिलाओं को अपने राजनीति संघर्ष की गाथा में मन्नू भण्डारी ने आगे कहा है कि ''हाथ उठा-उठाकर नारे लगाती, हड़ताल करवाती, लड़कों के साथ शहर की सड़कें नापती लड़की को अपनी सारी आधुनिकता के बावजूद बर्दाश्त करना उनके लिए मुश्किल हो रहा था, तो किसी की दी हुई आजादी के दायरे में चलना मेरे लिए। जब रगों में लहू की जगह लावा बहता हो, तो सारे निषेध, सारी वर्जनाएं और सारा भय कैसे ध्वस्त हो जाता है, यह तभी जाना और अपने क्रोध से सबको थरथरा, देने वाले पिताजी से टक्कर लेने का जो सिलसिला तब शुरू हुआ था, राजेन्द्र से शादी की तब तक वह चलता ही रहा[375]।'' बचपन से लेकर अब तक जो भी चलता रहा लेखिका के जीवन में वह सब उसके अपने बल व सत्य के साथ चलने का परिणाम था। जीवन में परिस्थिति चाहे जो भी रही हो महिलाओं के लिए राजनीतिक सफर कभी आसान नहीं रहा। इसके पीछे सबसे बड़ा पितृसत्ता का हाथ रहा है पुरूष ने कभी भी महिलाओं को मुख्यधारा में आने हीनहीं दिया है। पुरूष सदैव यह सोचता रहा कि अगर राजनीति में महिलाएं आ गई तो वह अपने अधिकारों की मांग करेगी और

[374] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 23

[375] वहीं, पृ0 23

तुम्हारी सत्ता खत्म हो जाएगी। परन्तु हिम्मत और हौसलों के दम पर महिलाएं आगे आई और उन्होंने अपने लिए एक अपनी जमीन स्वयं तैयार करनी आरम्भ की।

4.4.1 **समान दर्जा न मिलना** -

समाज पुरूष और स्त्री दोनों से मिलकर बना है इसी नाते समाज में दोनों को बराबरी का हक होना चाहिए। जितनी स्वतंत्रता पुरूष को है इतनी महिलाओं को भी होनी चाहिए। वैदिक काल में महिलाओं को पुरूषों से भी ज्यादा अधिकार थे। समाज के प्रत्येक वर्ग में उनका मान सम्मान था उन्हें अपने फैसले स्वयं करने का अधिकार था। विवाह आदि के समय भी महिलाएं अपने लिए स्वयं वर का चुनाव करती थी। परन्तु मध्यकाल में विदेशी आक्रांताओं ने स्त्री अस्मिता को तार-तार करने का प्रयास किया इसके कारण महिलाओं की स्वतंत्रता कम होती चली गयी। घर की चार दीवारी ही उसका संसार बन गयी थी। महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करना पुरूषों का काम हो गया था। इसी का फायदा पुरूषों ने उठाया और महिलाओं के मन में ऐसी धारणा भर दी जिससे वे अपने आप को कमजोर समझने लग गयी। महिलाओं द्वारा पुरूषों के किसी भी बाहरी काम में हस्तक्षेप न के बराबर था। यह कर्म शताब्दियों तक चलता रहा इससे महिलाओं ने पुरूषों की गुलामी करना अपनी नियति मान लिया। परन्तु धीरे- धीरे महिलाओं ने घर की चाहरदीवारी से निकलने की कौशिश आरम्भ की। वह बाहर के कार्यो में भी पुरूषों की मदद करने लग गयी। फिर भी पुरूषों ने कभी भी महिलाओं को समानता

का दर्जा नहीं दिया। भारत का संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ, जिसमें पुरूष व महिलाओं को समान अधिकार दिए गए हैं परन्तु सामाजिक स्तर पर महिलाओं को पुरूषों के दर्जा आज भी नहीं प्राप्त हुआ है। हमारी सनातन संस्कृति में पत्नी को अर्द्धांगिनी माना जाता है अर्थात् पुरूष का आधा भाग होता है। समाज में होने वाले उत्सवों, राशन कार्ड, निमत्रंण पत्रों पर पहला नाम पुरूष का लिखा होता है उन पर पत्नी के नाम को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता। पुरूष अपने बराबर कभी भी स्त्री को लाना नहीं चाहता। मैत्रेयी पुष्पा लिखती है कि ''मेरी जिन्दगी की लय किसी मातमी जुलूस सी हो गयी है। जिसमें लोग बिना दाएं-बाएं देखे बस सिर झुकाए चले जाते है। या समझते कि अपने अधिकार की बात कहना मर्यादा का उल्लंघन लगता था। आदर-सम्मान, मर्यादा, कुलशीलता निभाना और शीलवती गुणवती बहु होना आसान नहीं होता। बेटा खून के आंसू रूलाता रहा मुझे इस परिवार में शादियां होती है, उत्सव मनाते हैं, तो कार्ड छपवाए जाते हैं, तमु वहां कहीं-कहीं नहीं होती हो। मेरी बेटियां डॉक्टर बनने के बावजूद परिवार के स्तर पर खारिजनाम जैसे हमारे घर में एक ही व्यक्ति हो, जो पुरूष है, तेरे पिता। आंसू पीते हुए यही मान लेना होता मुझे। क्या यह घाव मेरी भूल का कारण है या स्वाभाविक है यह तकलीफ? तकलीफ जिसे में दिल में दबाए जी रही हूँ[376]।'' स्त्री भी इंसान है उसकी भी अपनी इच्छाएं होती है, वह भी स्वाभिमान

[376] मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, पृ0 131

से जीना चाहती है। किन्तु पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उसकी इच्छाओं को सदैव दबाने का काम किया है और स्त्री के स्वाभिमान को कुचला है। पुरूष स्त्री को अपने बराबर दर्जा कभी नहीं देना चाहता। स्त्री के मन में उत्पन्न सभी सवालों को यह जानबूझकर दबाने का प्रयास शताब्दियों से करता आ रहा है।

स्त्री की समानता की महज बातें व कानून बनाएं जाते हैं पर उन्हें न तो लागू किया जाता और नहीं समाज क्योंकि पुरूष प्रधान समाज कैसे इन कानूनों को लागे कर सकता है समाज में। एक बड़ी ही हास्यास्पद बात है जब कानून स्त्रियों के लिए बनाए जाए तो उन्हें पुरूष बनाते हैं। स्त्री के कानून बनानी वाली समिति व संसदमें स्त्रियां ही नहीं होती। इस प्रकार जब स्त्रियों के कानून पुरूष बनाता है तो वह कैसे स्त्रियों को सम्मान अधिकार दे सकता है। हमारे देश में कन्या भ्रूण हत्या बहुत बड़े पैमाने पर होती थी। वर्तमान मोदी सरकार ने 'बेटी बचाओं-बेटी पढ़ाओ का नारा दिया जिसके बाद समाज में बेटियों के प्रति थोड़ा दृष्टिकोण बदला है। परन्तु समानता के दर्जे की बात पुरूष के द्वारा फिर भी नहीं की गई। समानता का मतलब होगा आधा भाग। पुरूष मर जाना पसंद करेगा परन्तु स्त्री को आजादी और बराबरी का दर्जा कभी नहीं दे पाया और शायद दे भी न पाए तब तक महिलाएं उसेस्वयं प्राप्त न कर ले। महिला आत्मकथाओं की वेदना पढ़कर लगता है कि जब उच्च वर्ग की स्त्रियों की समानता नहीं प्राप्त हो पाई है तो निम्न व गरीब परिवारों की महिलाओं की स्थिति कैसी होगी।

4.4.2 **महिला उम्मीदवार पर पति का हक** -

संसार को आगे बढ़ाने के लिए पति और पत्नी का महत्त्व एक समान है। दोनों के मिलन से संसार आगे बढ़ता है। भारतीय संस्कृति में पति के लिए पत्नी और पत्नी के लिए पति देवता समान माने गए है। परन्तु बदलते परिवेश में हमारे संस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में अब स्त्री का स्थान बराबरी का नहीं है क्योंकि समाज पुरूष प्रधान हो गया है। इसलिए पुरूष ने महिलाओं पर अपना अधिकार समझ लिया। यह अधिकार या हक पुरूष और भी प्रबल तरीके से समझने लगता है जब स्त्री उसकी पत्नी बन जाती है। पुरूष पत्नी को एक गुलाब की तरह देखता है। पुरूष कभी भी नहीं चाहता कि उसकी पत्नी उसके सामने किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता की बात करें। वह स्त्री को नौकरी भी करवाने के पक्ष में नहीं होता है अगर स्त्री नौकरी भी करती है तो उसके वेतन पर पुरूष अपना अधिकार रखता है। पुरूष चाहे उच्च वग्र का हो या मध्यम वर्ग का वह स्त्री पर अपना अधिकार जमाता है। इसका शिकार बड़ी-बड़ी हस्तियां भी होती है। रमणिका गुप्ता अपने पति से परेशान होकर उसे कहती है कि ''गुलाम या मूरख बहस नहीं करते। न मैं तुम्हारी गुलाम हूँ और न ही मैं मूरख हूँ[377]।'' लेखिका ने जब ये शबद अपने पति को कहे होंगे तब उसके मन में कैसा भाव होगा पुरूषों के दबाव का इसका अनुमान सहज रूप से ही लगाया जा सकता है। पुरूष अपनी पत्न नपर इस प्रकार हक जमाता है जैसे वह पशु हो और उसने उसको खरीद

[377] रमणिका गुप्ता, आपहुदरी, पृ0 320

रखा है, अब वह उसके द्वारा निर्धारित खूंटे पर बंधी रहे और उसकी परीधि को ही अपना संसार मानकर अपना जीवन यापन करें। पुरूष स्त्री को हर रूप में सहजता से छूट दे देता है परन्तु जब स्त्री पत्नी रूप में पुरूष के साथ होती है तो वह कभी भी उसको किसी भी प्रकार की आजादी नहीं देना चाहता। पत्नी रूप सामने आते ही पुरूष की मनोदशा बदल जाती है वह अपने आप को बड़ा समझता है और अपनी पत्नी को हीन दृष्टि से देखता है। मन्नू भण्डारी का नाम हिन्दी साहित्य में बहुत बड़ा नाम है परन्तु उनका मानना है अगर उनके पति राजेन्द्र बाबू उसको एक पत्नी के रूप स्वतत्रं ता और उस पर विश्वास करते तो यह जीवन में खुश रहती है और जितना लिखा है उससे कहीं ज्यादा लिख पाती। वे कहती है कि ‘‘लेखन के कारण ही हमने विवाह किया था। हम पति-पत्नी बने थे। उस समय मुझे लगता थ कि राजेन्द्र से विवाह करते ही लेखन के लिए तो जैसे राजमार्ग खुल जाएगा और उस समय यही मेरा एकमात्र काम्य था। उस समय कैसे में यह भूल गई थी कि शादी करते ही मेरे व्यक्तित्व के दो हिस्से हो जाऐंगे लेखक और पत्नी। इसमें कोई संदेह नहीं कि मेरे लेखकीय व्यक्तित्व को राजेन्द्र ने जरूर प्रेरित और प्रोत्साहित किया .... लेकिन मेरे व्यक्तित्व का पत्नी रूप? इस पर राजेन्द्र निरन्तर जो और जैसे प्रहार करते रहे उसका परिणम तो मेरे लेखक ने भी भोगा। निरन्तर खंडित होते आत्मविश्वास से लेख्न में आए गतिरोध का जो सिलसिला शुरू हुआ अन्ततः वह उसके पूर्ण विराम पर ही समाप्त

हुआ[378]।'' इस प्रकार से अगर संविधान की स्थिति की बात करें तो लड़की को अपनी पुश्तैनी सम्पति में पूरा हक मिला हुआ है। किन्तु अगर लड़की का पिता अपनी बनाई हुई सम्पति की कोई वसीयत बना देता है तो बात अलग है। लड़की की शादी के बाद पति की सम्पति पर पत्नी का मालिकाना हक नहीं होता अपितु पति की हैसियत क हिसाब से उसे गुजारा भत्ता दिया गया है। महिला को यह अधिकार है कि उसका पालन-पोषण उसका पति अपनी हैसियत के हिसाब से करें शादी विवाह के संबंधों में यह कानून है कि पत्नी पति से गुजारा भत्ता मांग सकती है।

4.4.3 **राजनेताओं द्वारा महिलाओं का शोषण** -

देश को चलाने और जनता के हितों को ध्यान मे रखते हुए कानून बनाने का कार्य संसद में जनता द्वारा चुने हुए राजनेता करते है। देश व समाज का चाहे कोई भी पक्ष हो सभी को सूचारू रूप से चलाने के लिए राजनेता कानून बनाते हैं। किन्तु बहुत बार देखा गया है कि ये राजनेता ही जनता के पैसे को लूटने का काम, भ्रष्टाचार आदि में लिप्त पाए जाते हैं । राजनेता जनता के पैसे का पैसे का प्रयोग अपने ऐशो-आराम के लिए करते हैं राजनेताओं के साथ बड़े-बड़े अधिकारी भी मिले होते हैं जो विभिन्न अपराधों में राजनेताओं का मार्गदर्शन करते हैं। राजनेता व बड़े अधिकारी भ्रष्टाचार के अतिरिक्त महिलाओं को भी शोषण का शिकार बनाने में पीछे नहीं रहते। बहुत से राजनेताओं पर समय-समय पर ऐसे

[378] मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, पृ0 10

आरोप लगे भी है और सिद्ध भी हुए। राजनेताओं व बड़े अधिकारों द्वारा महिलाओं का शोषण आम बात है। इनके लिए रात को कॉलेज के होस्टल की लड़कियां या वे महिलाएं जो काम के लिए अपने घरों से बाहर अकेली रहती है उनका बंदोबस्त किया जाता है। इस प्रकार की लड़कियों और महिलाओं को बहलाने-फूसलाने का कार्य महिलाओं द्वारा ही राजनेताओं या अधिकारियों के कहने पर ही किया जाता है। एक बार जब कोई लड़की उनके बहकावे में आ जाती है तो फिर वह उसे बाहर नहीं जाने देती। बड़े-बड़े राजनेताओं व अधिकारियों को खुश करने के लिए लड़कियों का इस्तेमाल किया जाता है। बहत बार देखा गया है कि किसी विश्वविद्यालय में महिला होस्टल वार्डन भी ऐसे मामलों में लिप्त पाई जाती है। राजनेताओं द्वारा और अधिकारियों द्वारा महिलाओं का शोषण कोई नई बात नहीं है। जब भारत आजाद हुआ तब लाखों हिन्दू व सिक्ख महिलाओं का शोषण व बलात्कार मुस्लिमों के द्वारा किया। रमणिका गुप्ता जोकि हिन्दू महिलाओं की अपेक्षा मुस्लिम महिलाओं के हक के लिए लडी वे खुले आम अफसरों पर आरोप लगाती है और कहती है कि ''ये तो भाषण दे रहे हैं और लड़किों को खोजने का आश्वासन दे रहे हैं, सबके सब झूठ बोलते हैं। इनके घरों में ही तो लड़कियां है। इन्हीं लोगों के घरों में जाइए एक-एक के यहां पांच-पांच, दस-दस लड़कियां मिल जाएगी[379]।'' इसी विषय में रमणिका गुप्ता ने कहा है कि ''राजनीति और समाज सेवा में आत्मविश्वास, हौंसला, निडरता और हठ जरूरी चीजें है। एक औरत को आगे बढ़ने

[379] रमणिका गुप्ता, हादसे, पृ0 21

के लिए 'थथेर' होना भी जरूरी है। 'थथेर' का मतलब संवेदनशील नहीं, बल्कि पूर्णतया संवेदनशील होते हुए विपरीत स्थितियों में हटे रहना है[380]।''

4.4.4. **प्रत्यक्ष रूप से महिला भागीदारी की समस्या**

भारत में महिलाओं की स्थिति प्राचीन काल राजनीति में अच्छी थी परन्तु धीरे-धीरे यह लुप्त होती चली गई। हमारे ऐसी बहुत सी महिलाओं के उदाहरण है जिन्होंने राजनीति स्तर पर देश का नाम ऊँचा किया है परन्तु यह संख्या बहुत ही कम है। महिलाओं की राजनीति भागीदारी की जब हम बात करते हैं तो उसके आंकडे बहुत ज्यादा अच्छे नहीं है। जब हम राजनीति मे सक्रिय रूप से महिला भागीदारी की बात करते हैं और जब हम वोटर्स के रूप में महिला भागीदारी की बात करते है तो दोनों ही स्थितियों में जमीन आसमान का अन्दर देखने को मिलता है। अर्थात् महिला वोटर्स के हिसाब से महिला भागीदारी सक्रिय राजनीति में न के बराबर है। महिला वोटर्स की जब हम बात करते हैं तो स्थिति हमें पहले से कुछ ज्यादा अच्छी दिखाई देती है। 1980 से 2014 के बीच महिला वोटर्स की संख्या में 15 प्रतिशत की बढ़ोतरी देखते को मिली है। 1990 में महिला मतदाताओं की संख्या में बढ़ोतरी होनी आरम्भ हुई थी और 2014 के लोकसभा चुनाव में अबतक का सबसे अधिक महिला मतदान हुआ। किन्तु अभी भी महिला मतदाताओं की स्थिति को बहुत अच्छा नहीं माना जा सकता है। एक तरफ तो महिला मतदान हुआ। किन्तु अभी भी महिला मतदाताओं की स्थिति को बहुत

[380] वहीं, पृ0 54

अच्छा नहीं माना जा सकता है। एकतरफ तो मतदाता वोट डालने जाती कम हैं और जो जाती हैं उनका बहुत बड़ा भाग स्वयं निर्णय नहीं लेता। महिलाओं का मत किस पार्टी या लीडर को जाएगा इसका फैसला घर के पुरूषों द्वारा ही किया जाता है। घर का पुरूष जहां बताता है वहीं पर महिला मतदाता अपना मत डालती है। अगर हम मतों की दृष्टि से देखते हैं, तो भारत में 2014 के लोकसभा चुनाव में महिला मतदाताओं की सबसे अधिक संख्या अरूणाचल प्रदेश में भी वहां पर महिला मतदाताओं की संख्या पुरूषों के मुकाबले ज्यादा थी। इसके विपरीत मध्यप्रदेश में स्थिति अरूणाचल प्रदेश के उलट थी राज्य की आबादी के हिसाब से यहाँ महिला मतदाताओं का प्रतिशत पूरे भारत में सबसे कम था। सक्रिय राजनीति की अगर बात की जाए तो 1952 से 2014 तक महिलाओं की स्थिति

-

वर्ष	लो.स. सीट	महिला उम्मीद्वारों की भागीदारी	विजय प्रतिशत
1952	484	22	4-5
1957	494	27	5-4
1962	494	34	6-7
1967	523	31	5-9
1971	521	22	4-2
1977	544	19	3-4
1980	544	28	5-1
1984	544	44	8-1
1989	521	28	5-3
1991	525	36	7-0
1996	541	40	7-4
1998	543	44	8-0
1999	543	48	8-8
2004	543	45	8-1
2009	543	59	10-9
2014	543	61	11-2

ये सभी आंकड़े चुनाव आयोग की वेबसाईट पर उपलब्ध हैं। बहुत बार यह देखा गया है कि महिलाएं चनुाव तो जीत जाती हैं किन्तु उन्हें क्या, कैसे और कब करना है यह सब फैसले घर के पुरूष या महिला का पति ही लेता है। पंचायत चुनावों में ऐसा अधिकतर देखने को मिलता है।

इस प्रकार से देखा जा सकता है कि वोट के मामलों में भी महिलाएं पुरूषों से कितनी पीछे है। देखा गया है कि जब भी महिला मतदान ज्यादा होता है तब परिवर्तन होता है। यह सम्पूर्ण भारत ने 2014 के आम चुनाव में देखा।

4.4.5 **राजनीति में स्त्री और पुरूष के अधिकारों का टकराव** -

पुरुषप्रधान व्यवस्था ने सदैव ही स्त्री के अधिकारों को दबाने का काम किया है। पुरूष किसी भी प्रकार के फैसलों में महिला की भागीदारी नहीं चाहता। हमारे समाज में एक कहावत बहुत ही व्याप्त है कि ''पंचायती फैसलों में महिला का क्या काम।'' किन्तु अब स्त्री अपनी जमीन धीरे-धीरे तैयार कर रही है। वह आगे बढ़ रही है। किसी भी क्षेत्र में जा रही है। वह वहां पर पुरूष को कड़ी चुनौती देने का काम कर रही है। जो भी कार्य पुरूष और स्त्री दोनों करते हैं वहीं कार्य स्त्री पुरूष से ज्यादा शानदार तरीके से करती है। जब से स्त्री अपने अधिकारों को जाना है तब से ही प्रत्येक स्तर पर पुरूष को स्त्री से टकराना पड़ रहा है। राजनीति के क्षेत्र में यह टकराव और भी गहरा हो जाता है। देखा जाए तो राजनीति समाज-सेवा का माध्यम है किन्तु जब राजनीति में सत्ता मिलती है तो मनुष्य को बहुत

सी ताकत भी मिलती है। जिसके दम पर वह अपने हिसाब से देश की सेवा कर सकता है। ताकत अपने पास रखने का आदि तो पुरूष कभी से है किन्तु राजनीति में महिलाओं के आने से थोड़ी बहुत शक्ति महिलाओं के पास भी आ जाती है तो पुरूष को भय सताने लग जाता है। पुरूष सोचता है कि अगर महिलाओं ने अपने अधिकार लेने आरम्भ कर दिए तो उनके सामने पुरूष का काला सच आ जाएगा। महिलाओं को पता चल जाएगा कि किस प्रकार से पुरूष ने उनके अधिकारों का हनन किया है। रमणिका गुप्ता जब सक्रिय राजनीति में होती है तब वह अपने खिलाफ विरोध का सामना करती है और पुरुषप्रधान व्यवस्था को चुनौती देती हुई कहती है कि ''लो हिम्मत है तो मारो, मां का दूध पिया है तो चलाओ फरसा। सामने खड़ी हूँ और देखती हूँ किसमें हिम्मत हे जो मुझे रोके[381]।'' लेखिका के इन शब्दों से लगता है कि पुरूष और स्त्री के अधिकार किस प्रकार से टकरा रहे है। जहां इस भाषा का प्रयोग तभी किया जाता है जब किसी के अधिकारों को इस प्रकार कुचला गया हो कि अब मरने या टकराने के अतिरिक्त उसके पास और कोई विकल्प नहीं है। पुरूष और स्त्री के टकराने का एक ओर कारण है स्त्री की चुप्पी। पुरूष के बार-बार प्रहारों पर भी स्त्री मौन रहती है। इसको पुरूष स्त्री की कमजोरी के रूप में देखता है। स्त्री की धरती के समान सहनशक्ति भी पुरूष के मन में डर को उत्पन्न करती है। स्त्री को इस बात से कोई समस्या नहीं है कि पुरूष के पास अधिकार क्यों है, वह न पुरूष से उसके अधिकार छीन रही, वह तो

[381] रमणिका गुप्ता, हादसे, पृ0 89

केवल अपने अधिकारों की मांग कर रही है। पुरूष की इसी मानसिकता के विषय में रमणिका गुप्ता कहती है कि ''मैं औरत हूँ डर जाऊँगी' जैसा निष्कर्ष निकालने का मौका राजनीति में आने के बाद प्रायः मैंने पुरूषों को दिया ही नहीं। हो सकता है कि इसके पीछे मेरी खुद की असुरक्षा की भावना रही हो। स्त्री सुलभ लज्जा भी एक तथ्य है जो पलायन की मानसिकता को प्रोत्साहित करता है[382]।''

4.5 **जातीय संघर्ष की समस्या** -

जातीय संघर्ष तो मुख्य रूप से दो धर्मों या दो जातियों में देखने को मिलता है। किन्तु यहाँ जातीय संघर्ष महिला और पुरूष दोनों के मध्य है अर्थात् एक की जाति स्त्री है और एक की जाति पुरूष है। स्त्री होने के नाते परिवार या समाज में महिलाओं को किसी भी प्रकार के कोई निर्णय लेने का अधिकार नहीं है। स्त्री को किसी न किसी प्रकार से अपनी गरिमा को बचाने का प्रयास करना पड़ता है। कभी वह पुरूष की मार सहकर, कभी वह उसकी उपेक्षा सहकर, कभी उसके सामने झुककर, कभी मौन रहकर। शायद इसी संघर्ष का परिणाम होता है कि बहुत बार महिलाएं आत्महत्या भी कर लेती हैं। प्रभा खेतान इसी प्रकार से एक बार आत्महत्या करने की सोचती है कि वह कहती है कि ''मैं भागकर पीछे वाले बरामदे में, एकदम रेलिंग के उपर चढ़ गई। रेलिंग के इस ओर एक पैर तथा दूसरा पैर उठने की तैयारी में। मैंने नीचे झांककर देखा पथरीली जमीन भी। मैं

---

[382] वहीं, पृ0 283-284

मर जाऊँगी। अच्छा होगा लेकिन मेरे मरने पर कौन रोयेगा? केवल दाई माँ और शायद गीता और पुष्पा नहीं किशन भी। बाबूजी रहे नहीं और अम्मा वे तो मेरे मरने पर बेहद खुश होगी।

बरामदे की रेलिंग पर बैठी एक पैर बाहर की ओर सुलाए हुए सोचे चली जा रही थी। अच्छा मैं जाऊँगी कहाँ? किस लोक में, क्या बाबूजी के पास? बाबूजी तो स्वर्ग में है, और दाई माँ कहती है कि जो आत्महत्या करके मरते हैं, वे ही प्रेत हो जाते है। आज सोचती हूँ कैसी असहाय और अनाथ बचपन था[383]। जिसका बचपन ऐसे संघर्ष में बीता हो तो सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारे समाज में जातीय संघर्ष किस कदर होती है। महिला और पुरूषों के मध्य जातीय संघर्ष में पुरूष सर्वेसर्वा होता है और महिला को सब कुछ सहन करना पड़ता है। महिला को बाजार की एक वस्तु से अधिक कुछ ज्यादा नहीं समझता है पुरूष। पुरूष ने अपने फायदे के लिए महिला को बेचने में भी कोई शर्म नहीं है। फिर चाहे वह उसकी बहन या बेटी ही क्यों न हो। पुरूष ने स्त्री के साथ जो भी रिश्ते बनाएं है वह केवल अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर बनाएं है। मैत्रेयी पुष्पा ने कहा है कि ‘‘लड़की खरीदी हुई घोड़ी से ज्यादा नहीं है। लड़की बेची हुई गया होती है ब्याह गौने के नाम पर खरीदने बेचने का धन्धा है। खेती नहीं हुई, बेटी काम आ जाती है। कस्तूरी को उसके पति ने आठ सौ रूपये में लिया था। यह रूपया

[383] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ0 38

जमींदार और साहूकार से लिए थे, जिनके डर से वह दिल्ली भाग गया था[384]।''

आज जब कोई भी महिला समाज में आगे आकर कुछ करना चाहती है तो उसे जातीय संघर्ष का सामना करना पड़ता है। स्त्री को स्त्री की बहुत बड़ी सजा चुकानी पड़ती है। पुरूष द्वारा स्त्री को कदम-कदम पर जलील किया जाता है। तथा स्त्री को कदम-कदम पर पुरूष से संघर्ष करना पड़ता है।

4.5.2 **वर्ग संघर्ष की समस्या** -

स्माज में साथ-साथ रहने वाले महिला व पुरूष में मुख्य रूप से दो प्रकार की भावनाएँ उत्पन्न होती है। समाज में हम देखते है कि एक व्यक्ति समाज या अपने परिवार को आगे बढ़ाने के लिए अपने आप को मिटा लेता है। कभी-कभी परिवार अपने किसी बच्चे को आगे बढ़ाने के लिए या उसे पढ़ाने के लिए अपने आप को मिटा लेता है। इस प्रकार देखा जाता है कि व्यक्ति या समाज के मध्य या व्यक्ति या परिवार के मध्य वर्ग संघर्ष चल रहा है। क्योंकि दोनों ही पक्षों का समान उद्देश्य होता है और दोनों ही एक भावना को लेकर ओ बढ़नेका काम करते है। इसके विपरीत ऐसा हो कि दोनों पक्षों के उद्देश्य समान न हो या दोनों अपने -अपने हितों का ख्याल अलग रखते हो तो ऐसी स्थिति में कहा जा सकता है कि उन दोनों के मध्य वर्ग संघर्ष चल रहा है।

पुरूष प्रधान समाज में जब तक स्त्री पुरूष के अनुसार चलती थी तब तक तो ठीक था अर्थात् जैसे पुरूष कार्य करने के लिए स्त्री को कहता वह वैसी ही करती

---

[384] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 20-21

है | तब तक तो उनमें वर्ग संघर्ष जैसी कोई बात सामने नहीं आई। किन्तु जब से स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई है तब से पुरूष और स्त्री के मध्य वर्ग संघर्ष का जन्म हुआ है। पुरूष और स्त्री के उद्देश्यों में एक का उद्देश्य सिद्ध होने पर दूसरे का उद्देश्य विफल होता हो तो जहां दोनों में भेड़ और भेडिये के हितों जैसा संबंध हो जहां एक शोषक और दूसरा शोषित हो, जहां एक पीड़ा देनेवाला और दसू रा पीड़ित हो, जहां वर्ग संघर्ष तीव्र हो जाता है। आज पुरूष और स्त्री के बीच वर्ग संघर्ष की चर्चा बहुत ही जोरों पर है, अपने वर्ग का लाभ, अपने वर्ग का स्वार्थ, वर्ग का गौरव, अपने वर्ग की सत्ता, अपने वर्ग का संगठन पर आज दोनों ने बहुत जोर दे रखा है। अनेक विमर्श और संस्थाएं इस दशा में प्रयत्नशील है। पुरूष और स्त्री दोनों इस दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहे है। आज विश्व 21वीं शताब्दी में जी रहा परन्तु महिलाओं को आज भी अपने अस्तित्व के लिए पुरूष से संघर्ष करना पड़ रहा है। प्रत्येक स्त्री का संघर्ष अलग प्रकार है। कौसल्या बैसंती को अपने परिवार में किसी भी प्रकार की आर्थिक स्वतंत्रता न थी। उन्हें एक-एक पैसे या सामान के लिए अपने पति के सामने याचक बनना पड़ता है। उसका पति घर के लिए आवश्यक वस्तुओं के पैसे भी उसे निगकर देता था। पैसे अलमारी के अन्दर रहते ताले के भीतर रहते। बहुत बार ऐसा होता की उसे अपनी छोटी-छोटी वस्तुओं के लिए तरसना पड़ता। उनका कहना है कि ‘‘मेरे कपड़े, चप्पल की सिलाई के लिए पैसे लेने में बहुत पीछे पड़ती थी तब पैसे देता था। वे भी पूरे नहीं पड़ते

थे। कभी नहीं देता था, कहता था अगले महीने लेना। जब अगले महीने पैसे देने की बात आती तब कुछ न कुछ कारण निकालकर झगड़ा करता, मारने दौड़ता[385]।'' ऐसी ही बातों से पता चलता है कि महिलाओं में वर्ग संघर्ष की स्थिति क्यों उत्पन्न हुई होगी। जब स्त्री पुरूष के आदेशों को मानती-मनती इतनी नीचे गिर गई कि उसे अब अपने आप से भी घृणा उत्पन्न होनी लगी तब स्त्री ने सोचा मुझे स्वयं को सशक्त बनाना होगा। स्त्री स्वयं को इतना सशक्त तो बनाए कम से कम उसे याचक तो न बनना पड़े। कौसल्या बैसंती कहती है कि ''अगर हम स्वाभिमान से अपनी उन्नति करना चाहते है तो हमें अपने पांव पर खड़ा होकर, अपने पर भरोसा रखकर, आगे बढ़कर होगा । हमें अपने अन्दर शक्ति पैदा करनी होगी। किसी का सहारा लेकर चलने से काम नहीं बनेगा[386]।'' वर्ग संघर्ष की समस्या उत्पन्न होने का एक और कारण सामन्ती व्यवस्था भी है। सामन्ती व्यवस्था में स्त्री एक वस्तु और सम्पति के समान है। सामन्ती व्यवस्था में स्त्री पुरूष की वासना को शांत करने वाली और पुरूष के लिए संतान उत्पन्न करने वाली मादा के समान है। इससे ज्यादा सामन्ती व्यवस्था में स्त्री और कुछ भी नहीं है।

---

[385] कौसल्या बैसंडी, दोहरा अभिशाप, पृ0 105

[386] वहीं, पृ0 124

4.5.3 **क्षेत्रीय संघर्ष की समस्या** -

क्षेत्रीय संघर्ष का सामान्य रूप से अर्थ किसी भू-भाग के लिए संघर्ष करने से है। किन्तु यहाँ पर क्षेत्रीय संघर्ष किसी जमीन के टुकड़े के लिए नहीं अपितु कार्य क्षेत्र से है। अर्थात् पुरूष और स्त्री के कार्यों में क्षेत्रीय संघर्ष किस प्रकार आड़े रहा है। पुरूष सभी क्षेत्रों में अपना अधिकार समझता है वहीं महिलाएं जिस भी क्षेत्र में जाती है वहीं पर अपनी मेहनत के दमपर अपनी छाप छोड़ने का काम करती है। इसलिए पुरूष और स्त्री के मध्य क्षेत्रीय संघर्ष की समस्या का जन्म हुआ। स्त्री का क्षेत्रीय संघर्ष से जुड़ा वास्तविक मुद्दा है उन सभी क्षेत्रों और रोजगारों में उसका प्रवेश, जिन पर पुरूषों का एकाधिकार अब तक समझा जाता रहा है। अब स्त्री ने भी उन क्षेत्रों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करवानी आरम्भ कर दी है। जिसके परिणामस्वरूप स्त्री को क्षेत्रीय संघर्ष की समस्या का सामना करना पड़ा। पुरूष चाहता है कि स्त्री उसके एकाधिकार वाले क्षेत्रों में अयोग्य ठहराई जाएं इसके पीछे पुरूष की एक बहुत बड़ी चाल है वह चाहता है कि घर व समाज में स्त्री की दोयम दर्जे की स्थिति बरकरार रहे। क्योंकि 21वीं शताब्दी के तीसरे दशक के आरम्भ तक भी पुरूषों की एक बहुत बड़ी आबादी महिलाओं के साथ बराबरी से जीना व रहना नहीं सीख पाई है। अगर ऐसी बात नहीं होती तो इतने सारे कार्य क्षेत्रों में तथा ऊँचे पदों से स्त्रियों को अब तक वंचित न रखा जाता और न ही स्त्रियों को सामाजिक और राजनीतिक सेवाओं के लिए अयोग्य माना जाता। समाज सेवा और राजनति में जहां महिलाओं को अयोग्य माना जाता है वहां मूर्ख से मूर्ख और धूर्त

से धूर्त पुरूष भी धड़ल्ले से घुस जाता है। इसी कारण महिलाओं को पुरूषों के साथ क्षेत्रीय संघर्ष करना पड़ रहा है।

यह कह देना पर्याप्त नहीं कि एक औरत पुरूष एक औसत स्त्री से ज्यादा कुशल होता है या पुरूषों के मुकाबले महिलाओं की बौद्धिक सम्पदा नहीं होती। पुरूष को यह सिद्ध करना होगा की महिलाएं पुरूषों के सामन बौद्धिक क्षमता प्राप्त नहीं कर सकती। इसके साथ पुरूष को यह भी सिद्ध करना की श्रेष्ठ से श्रेष्ठ स्त्री भी एक सामान्य पुरूष से कम योग्य होती है। पुरूष को इस बात पता है कि यह कभी हो ही नहीं सकता।

महिलाओं के साथ क्षेत्रीय संघर्ष की समस्या कार्य क्षेत्र पर ही नहीं अपितु सामाजिक व पारिवारिक स्तर पर भी बहुत होती है। महिला का परिवार में कार्य घर की देहलीज तक ही होता है। उसके बाहर का क्षेत्र पुरूष का होता है। ऐसा नहीं है कि घर में सब काम स्त्री की इच्छानुसार होते है। घर में क्या बनाना है वह सब भी पुरूष की इच्छा पर निर्भर करता है। वास्तव में एक स्त्री को पता नहीं होता की उसका दायरा है भी या नहीं। समाज तो जब समर्थन करेगा जब महिला का परिवार या उसका पति उसका समर्थन् करें। मैत्रेयी पुष्पा इसी विषय में कहती है कि ‘‘मेरा जीवन साथी, साथी के नाम पर जलकुक्कड़ आदमी है। दिशाओं में जब रंग बिखरने शुरू होते हैं, वह कालिख पोतने आ जाता है[387]।’’

[387] मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, प

4.5.4 **धार्मिक सम्प्रदाय की समस्या** -

धर्म का मूल अर्थ होता है सत्य की राह पर चलना। ब्रह्मचर्य, धैर्य, क्षमा, अहिंसा, सत्य, सहिष्णुता, आदि प्रमुख धार्मिक गुण माने जाते हैं व्यक्ति के। भारतीय सभ्यता में धर्म के शुद्ध आचरण पर बल दिया जाता है। जिनका पालन एक भारतीय नारी को आजीवन करना पड़ता है। जब तक वास्तव में स्वयं पुरूष अपने धर्म का पालन करता और स्त्री अपने धर्म का पालन करती जब तक सब ठीक या परन्तु जब से पुरूष ने धर्म का सहारा लेकर स्त्री का अपना अधिकार जामने व उसको बलि देने का काम किया है तब से पुरूष और महिला के मध्य संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। इसका मुख्य कारण है प्रत्येक धर्म में पुरूष और महिला के लिए अलग-अलग नियम है। आज समाज में नैतिक मूल्यों का पतन बड़ी ही तीव्र गति से हो रहा है। इसके साथ-साथ धार्मिक मूल्यों का भी विघटन हो रहा है। पढ़ी लिखी महिलाओं को भी न चाहते हुए इन धार्मिक मान्यताओं का पालन करना पड़ता है परन्तु उनके मन को तो पता होता है कि यह सब गलत है। मैत्रेयी पुष्पा स्त्री के मंगलसूत्र को 'घटमल्ला' मानती है। धर्म के नाम पर पत्नी को पति व बच्चों की लम्बी उम्र के लिए उपवास रखना पड़ता है जो केवल समाज में धार्मिक अंधविश्वास है। मैत्रेयी पुष्पा ने करवाचौथ के विषय में कहा है कि ''हमें अपनी निष्ठा और प्रीतिभरी वफादारी को भूखें रहकर निभाना होता है।

करवाचौथ के साथ पति की उम्र का चक्कर तो बेकार लगा दिया है[388]।'' इस प्रकार धर्म के नाम पर पत्नी को एक दिन का व्रत करके यह सिद्ध करना पड़ेगा कि वह वास्तव में ही अपने अपति की लम्बी आयु चाहती है। मैत्रेयी पुष्पा करवाचौथ के विषय में कहती है कि ''करवा चौथ के व्रत से ही युग साल डरा करती कि अब वह कत्ल का दिन आनेवाला है[389]।''

विश्व में जितने भी धर्म है सभी धर्मों में अंधविश्वास धार्मिक स्तर पर व्याप्त है परन्तु सबसे ज्यादा हिन्दूओं के अंधविश्वासों के विरूद्ध आवाज को उठाया गया है। मुस्लिम धर्म के विषय में कोई बुराई कर नहीं सकता इतनी किसी भी लेखक या समाज सुधारक में हिम्मत नहीं कि एक बार फ्रांस में समाचार पत्र का कार्यालय और एक बार एक शिक्षक का गला काट हत्या कर दी। हिन्दू धर्म विश्व में सभी धर्मों में उदार है। इसलिए कोई भी लेखक या समाज सुधारक हिन्दू धर्म के विषय में कुछ भी कह देता है। कुछ बातों में सच्चाई होती है कुछ धर्म को बदनाम करने के लिए होती है। परन्तु महिला आत्मकथा लेखिकाओं द्वारा ठीक-ठाक धार्मिक समस्याओं को उठाया गया है। सुशीला टाकभौरे धार्मिक सम्प्रदाय की समस्याओं व आडम्बरों के विषय में कहती है कि ''हिन्दू धर्म में नदी, पहाड़ पेड, पौधे गाय, सांप, सभी को महत्त्व और सम्मान दिया जाता है लेकिन अछूत मनुष्यों को कोई स्थान नहीं, कोई सम्मान नहीं। उनके लिए कोई दया संवेदना नहीं? हिन्दू धर्म के

---

[388] वहीं, पृ0 63

[389] वहीं, पृ0 93

आडम्बर में मिट्टी से बने पुतलों को भी भगवान की तरह पूजा करता है। मगर इंसानों को इंसान नहीं मानते, यह हिन्दू धर्म की विडम्बना है हिन्दू संस्कृति का कलंक है[390]।'' देखा जाए तो सुशीला टाकभौरे की कुछ बातें ठीक भी है और कुछ बातें ऐसी है जो किसी को हजम नहीं होने वाली क्योंकि हमारी संस्कृति में मानव तो क्या पत्थरों को भी पूजा जाता है। सुशीला टाकभौरे इस बात को भूल गयी की भारत 1947 से पहले लगभग 1100 वर्षो तक गुलाम था। गुलाम तो चाहे किसी भी जाति का हो वह राजा के लिए अछूत ही होता है इसी कारण अगर विस्तृत दृष्टिकोण से देखा जाए तो 1947 से पहले भारत का प्रत्येक मनुष्य अछूत ही था। किन्तु फिर भी हमारे धर्म में कुछ धार्मिक समस्याएं है जिनका निवारण आवश्यक है। इन धार्मिक समस्याओं को महिला आत्मकथाकार लेखिकाओं ने बड़ी ही प्रबलता से उठाने का काम किया है।

4.6 **सांस्कृतिक समस्या** -

संस्कृति मनुष्य के जीवन का प्राण मानी जाती है। इसी के परिणाम स्वरूप मनुष्य विभिन्न प्रकार के सद्कर्मों को करता है। हमारे पूर्वजों ने जीवन को सही दिशा देने के लिए कुछ नियमों को बनाया था जो मनुष्य के जीवन का आधार माने गए है। हमारे पूर्वजों ने वेदों के ज्ञान व स्वयं के अनुभव के आधार पर जीवन में सुख व शांति के लिए जो नियम बनाए वे ही हमारे सांस्कृतिक नियम कहलाएं ।

[390] सुशीला टाकभौरे, शिकंजे का दर्द, पृ0 51

मनुष्य का आचरण, उसका व्यापार, उसके रीति रिवाज आदि उसकी संस्कृति से उत्पन्न होने वाले प्रमुख तत्त्व है।

संस्कृति किसी भी धर्म या सभ्यता के मूल में उसकी संस्कृति होती है। संस्कृति का स्वरूप समुन्द्र के जल के सामन नहहीं होता अपितु वह तो बहती हुई सरिता सा निर्मल व पावन होता है। इसी कारण संस्कृति के स्वरूप में बदलाव होता रहता है। मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुसार संस्कृति का स्वरूप भी बदलता रहता है। मानव गर्भ से मृत्यु तक तथा उसके बाद भी पितर श्राद्ध तक अपने सांस्कृति बंधनों में बंधा रहता है। मनुष्य का रहन-सहन, वेशभूषा, खान-पान, आचार-विचार, रीति-रिवाज, पर्व-उत्सव आदि सभी संस्कृति की परीधि में आते है। संस्कृति समय के साथ परिवर्तित तो होती है। जो अपने में कुछ बदलाव करती है। ये बदलाव सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के होते है। हमारे समाज में ऐसी बहुत सी प्रथाएं है जो हमारी संस्कृति को बदनाम करती है। इनमें एक दहेज प्रथा है। दहेज प्रथा पर 1 जुलाई 1961 पर कानूनी रूप से भी प्रतिबंध लगा दिया है। किन्तु फिर भी आज भी बहुत बड़े पैमाने पर इसका चलन समाज में है। मैत्रेयी पुष्पा अपने विवाह में लड़के वालों के दहेज मांगने का बहाना बताती है, लड़के वाले अपनी प्रतिष्ठा का सवाल बताकर दहेज मांगते है। लेखिका कहती है कि ‘‘शर्मिन्दा मत करो सेठ जी। लियाकत और काबिलियत वाले बेटे का ब्याह कोड़ियों में कर ले तो आस-पास फैला गांव-समाज, नाते रिश्तेदार हम पर थूकेंगे।

मूर्ख तरह धिक्कार जाना किसको बर्दाश्त होता है? अपने लिए कौन मांगता है, सब इज्जत के लिए भिखारी बनते हैं, ज्यादा कुछ न उगलवाओं। इलाके में देने वालों की कमी नहीं है[391]।'' जब समाज में इस प्रकार से लोग दहेज को अपनी इज्जत से जोड़कर देखते हैं तो सांस्कृतिक समस्या तो उत्पन्न होना स्वाभाविक है। सांस्कृतिक समस्या एक स्त्री के लिए कदम-कदम पर बाधा बनने के लिए खड़ी है।

हमारे समाज में विधवाओं का जीवन बहुत ही उपेक्षित हो जाता है। परन्तु आज के समय मेंतो इसमें बहुत सुधार आया है। 'पिंजरें की मैना' नाम से लिखी आत्मकथा में लेखिका जाट जाति के बारे में कहती है कि ''अचानक लड़ाई में सूबेदार मारा गया। जाट प्रथा के अनुसार घर में देवर-जेठ हो तो घर की बहू विधवा नहीं रह सकती - उसे वह चादर डालकर घर बैठा लेता है। भाभी पच्चीस की हो और देवर बारह-चौदह का हो, तब भी चादर डाल सकता है[392]।'' इस प्रकार से अनेक ऐसी समस्याएं है जो एक स्त्री को संस्कृति के कारण उत्पन्न होती हैं।

4.6.1 **मानवीय मूल्यों का विघटन** -

सनातन संस्कृति की चिन्तन धारा का केन्द्र अध्याय रहा है। इसको मूल है कि अध्यात्म में शांति, विवेक, श्रद्धा, दया, क्षमा, सत्य आदि सात्विक गुणों की चर्चा की जाती है। भारतीय संस्कृति में जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष को माना गया

---

[391] मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ0 74

[392] चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पिंजरे की मैं ना, पृ0 267

है। इसके साथ ही अगर देखा जाए तो एक सभ्य समाज में सभ्य मनुष्यों के लिए इन गुणों को अपनाना बहुत ही आवश्यक है। 'कला-कला के लिए' के स्थान पर 'कविता-कविता के लिए' का नारा देने वाले विद्वान साहित्य के सात्विक आचरण को भूल जाते हैं। इसी कारण मानवीय मूल्यों का विघटन बड़ी ही तीव्र गति से हो रहा है। वर्तमान समय में नैतिकता चरित्र का गुण नहीं अपितु भाषण का एक शानदार विषय है। आज के समाज में और राजनीति में नैतिकता का प्रयोग केवल इसी रूप में हो रहा है। आज का समाज धर्म पर आधारित न होकर अर्थ केन्द्रित होता रहा है। नैतिकता का मापदण्ड केवल यह रह गया है कि कभी कोई अनैतिक काम करते हुए पकड़ा न जाए। जब तक व्यक्ति पकड़ा नहीं जाता वह नैतिकता की परिपाटी प्रचलित है| किन्तु अब इनका विखंडन हो रहा है। हमारी संस्कृति में संयुक्त परिवार की परिपाटी प्रचलित है एकल परिवार को बढ़ावा दिया जा रहा है। आज के समय में व्यक्तिगत महत्त्वकांक्षा बढ़ने से सभी व्यक्ति भौतिकता की तरफ दौड़ रहे हैं। समाज को अपने हिसाब से संचालित व उसे बदलने की भावना लगभग हर व्यक्ति में होती है। समाज को कोई महत्त्व नहीं है। जो कुछ है वह सब व्यक्ति ही है। संयुक्त परिवार टूट रहे हैं गांव टूट रहे हैं, मूल्यों का विघटन हो रहा है। आज सभी अकेले हैं कोई रिश्ता-नाता किसी का नहीं है। लोगों के दिल से आत्मीयता समाप्त होती जा रही है। लोगों में स्वार्थ की प्रवृति बढ़ती जा रही है।

पुरूष और स्त्री ने अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बढ़ाने का कार्य अपनी आत्म-प्रतिष्ठा की भावना के कारण किया है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता के परिणाम स्वरूप यौन दृष्टि, विवाह के लक्ष्य तथा वंश वृद्धि की भावना को तो अपने अनूकूल पाया है, किन्तु इन भावनाओं के मूल में निहित दाम्पत्य सम्बन्ध की अटूटता, दैहिक पवित्रता, सतीत्व की अवधारणाएं, आत्मिक संबंध आदि को निरर्थक सिद्ध करने का काम किया है। ऐसी मानसिक स्थिति वाले लोग विवाह को केवल शारीरिक आवश्यकता पूर्ति का माध्यम मानते है। महिला आत्मकथाकार भी शादी के प्रति कुछ ऐसे ही विचार रखती है। वे स्वयं हमारे सांस्कृतिक मूल्यों को तोड़ती है और स्वयं को आधुनिक घोषित करने के नाम पर पुरूष से संवेदना बटोरना चाहती है। प्रभा खेतान अपनी आत्मकथा में कहती है कि ‘‘मैं उसके (डॉ. सर्राफ) साथ थी मगर किस रूप में? मैं इस रिश्ते को कोई नाम नहीं दे पाऊँगी। भला प्रेमिका की भूमिका भी कोई भूमिका हुई? प्रेम तो सभी करते है। प्रेम करने वाली स्त्री, माँ, बहन, पत्नी, वह कुछ भी हो सकती है या फिर सीधे-सीधे रखैल कहो ना[393]।’’ इन नव उपनिवेशवाद और भूमंडलीकरण के दौर में मनुष्य इतना व्यस्त हो गया है कि उसे किसी के प्रति कोई दायित्व है यह भी याद नहीं है। आज मनुष्य समाज से केवल उतना ही जुडना चाहता है जितना उसको समाज की आवश्यकता होती है। आज के इस दौर में मनुष्य के संबंधों में महज औपचारिकता रह गयी है।

[393] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ0 9

इसी के परिणामस्वरूप मानवीय मूल्यों का विघटन की प्रक्रिया तीव्र हो रही है। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं तक सीमित रहना चाहता है | जब से टी0वी0 आया तब से हमारे सामाजिक मूल्यों का टूटना आरम्भ हुआ था अब जबसे मोबाइल आया है तब से हमारे परिवारों का टूटना आरम्भ हुआ है। इस प्रकार हमारे मानवीय जीवन मूल्यों में प्रत्येक स्तर पर गिरावट आ रही है।

4.6.2 **नैतिकता का पतन** -

महिला आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से स्त्री के घुटन, अतृप्ति तथा नैतिकता के बहुत से स्तरों को समाज के समाने लाने का काम किया है। महिला आत्मकथाकारों अपने व्यक्ति जीवन में समाज में जो महसूस किया तथा जो देखा उस सबका वर्णन अपनी आत्मकथाओं में किया है। इन आत्मकथाओं की आत्मकथाकार स्वयं तथा उनके आस-पास के लोग नैतिकता व अनैतिकता धारणा में विचलित दिखायी पड़ रहे है। इन सबके जीवन मूल्यों में समाज की नैतिकता व संस्कृति के मापदण्डों के प्रति उदासीनता झलकती है। समाज में महिलाओं के प्रति पुरूष की सोच के प्रति महिला लेखिकाओं का विद्रोही स्वर हमें सुनायी पड़ता है। जब भी पुरूष स्त्री को अपने अनुसार नहीं पाता है तो वह सोचता है कि मैं औरत के मन की धारणा को ही बदल दूं। इसी कारण वह नैतिकता के पतन पर उतारूं हो जाता है। पुरूष ने स्वयं को स्त्री के स्थान पर रखकर शायद ही कभी देखा होगा।

आज हमारी विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति स्त्री-पुरूष के अनैतिक संबंधों के कारण शर्मसार हो रही है। आज के समाज में पैसे को ही सब कुछ माना जाता है। जो स्त्री पैसा कमाती है। चाहे वह किसी को भी चाहे वह सब उस स्त्री के लिए जायज है। एक स्त्री किसी को शादीशुदा पुरूष से प्यार होता है तो वह यह नहीं सोचती है कि उनके कारण किसी अन्य महिला की जिन्दगी वह खत्म कर रही है किन्तु समाज में अनैतिकता का बोलबाला है। बिना शादी के अपने शरीर की जरूरत को वह पूरी करना चाहती है। प्रथा खेतान अपनी अनैतिकता को सहानुभूति मे बदलने की कौशिश तो करती है परन्तु वह सफल नहीं हो सकती वह कहती है कि ‘‘क्या घर, पति और एक बच्चे के बिना मैं अधूरी हूँ? या फिर मेरे दामन का दाग दूसरों की नजर में मेरी प्रत्येक उपलब्धि को तुच्छ ठहराएगा। सम्पर्क में आने वाले लोग भी चाहे अनचाहे मेरी इसी कमी की ओर इशारा करते। मेरी गृहस्थी नहीं थी पर किसी और की गृहस्थी को पुरूष ने नैतिकता के नाम पर महिलाओं का शोषण बहुत किया है[394]। जब भी स्त्री पुरुषप्रधान व्यवस्था को तोड़ने व स्वयं को एक इंसान की तरह देखने का प्रयास करती है तभी पुरूष उसके पैरों में नैतिकता के नाम की बेड़िया डाल देता है। वैसे देखा जाए तो अनैतिक कार्य पुरूष, महिलाओं से ज्यादा करता है। परन्तु नैतिकता का रास्ता महिलाओं को दिखाता है। नैतिकता किसी की जागीर नहीं होती वह तो हमारा सांस्कृतिक मूल्य होती है।

[394] वहीं, पृ0 261

प्रभा खेतान भारतीय प्राचीन विवाह पद्धति को मानने के लिए तैयार नहीं है| इसी कारण वह विवाहित तथा पांच बच्चों के पिता डॉ. सर्राफ के साथ प्रेम करती है, उसके साथ रहना चाहती है, उसे शारीरिक संबंध बनाती है। एक तरफ जहां प्रभा खेतान प्रेम को ऊँचा दर्जा देने की बात करती है वहीं दूसरी तरफ वह किसी के गृहस्थ जीवन को भी तो तोड़ रही है। शायद प्रभा खेतान की नैतिकता का मापदण्ड स्वयं को खुश रखना है। इसी नाते वह समाज की किसी भी प्रकार की कोई प्रवाह नहीं करती। अन्या से अनन्या में प्रभा खेतान कहती है कि ‘‘जो घट गया, जिससे प्रेम हो गया मैं उसे ही विवाह मानती हूँ और समाज? मुझे समाज की परवाह नहीं[395]।’’

[395] वहीं, पृ0 86

4.6.3 **पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव** -

भारतीय सनातन संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीनतम संस्कृति है। भारतीय सनातन संस्कृति यूनान, रोम, मिस्त्र, चीनी आदि संस्कृतियों से प्राचीन व समृद्ध रही है। भारतीय संस्कृति के विश्व में सर्वश्रेष्ठ होने का कारण आध्यात्म माना जाता है। हमारे देश की संस्कृति ''वसुधैव कुटुम्बकम् '' पर आधारित है संस्कृति पर मनुष्य का शारीरिक मानसिक तथ आध्यात्मिक विकास निर्भर करता है।

अंग्रेजों के भारत पर शासन के समय से ही हमारे देश में पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाने लगा परन्तु आजादी बाद से इस पाश्चात्य प्रभाव से जिस प्रकार वृद्धि हुई है यह अपने आप में दर्शाता है कि आज हमारा समाज किस गति से हमारी संस्कृति को छोड़ पाश्चात्य संस्कृति के आकर्षण की तरफ बढ़ रहा है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के परिणाम स्वरूप समाज पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रकार के प्रभाव पड़ा है। जहां पर पाश्चात्य संस्कृति ने नग्नता को परोसा है वहीं महिलाओं ने अपने विरूद्ध होने वाले अमानवीय व्यवहार को भी नकारना आरम्भ कर दिया है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव गांव की अपेक्षा शहर में ज्यादा है। सुशीला जब अपने पति के साथ गांव में रहती थी तो उसके विरोध में एक शब्द भी नहीं बोल पाती थी। जब भी उसका पति कुछ कहता या डाटता तो वह कुछ न बोलकर केवल रोने लगती। किन्तु जब से वह अपने पति के साथ कलकता गयी है उसकी आदतों में बदलाव होने लगा है। यह बदलाव पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव का परिणाम है। वह स्वयं कहती है कि ''कलकता

आकर मेरी आदत बिगड गई है क्योंकि बीच-बीच में पति के साथ बहुत बहस करने लगी हूँ। गांव में मैं डरती थी, कुछ बोल नहीं पाती थी, लेकिन यहां आकर पता नहीं मेरे सिर पर क्या सवार हो जाता है कि बोलने लगी हूँ[396]।'' पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव समाज के हर वर्ग पर देखा जा सकता है परन्तु महिलाओं पर इसका कुछ ज्यादा ही प्रभाव दिखाई पड़ रहा है। मध्यम वर्ग की महिलाओं में कपड़ों के प्रति कुछ ज्यादा ही आकर्षण दिखायी पड़ता है। वह एक साड़ी या सूट किसी एक पार्टी या उत्सव में पहन लेती है तो वह फिर उसे दोबारा किसी पार्टी या उत्सव में नहीं पहनना चाहती उसे घर पर ही पहनती है। इसके विपरीत जो पश्चिम के लोग इससे बचते हैं। विश्व में सबसे ताकतवर व्यक्ति अमेरिका का राष्ट्रपति माना जाता है। फरवरी 2020 में जब वे भारत आए 'नमस्ते ट्रंप' कार्यक्रम में। जिसका आयोजन भारत के प्रधानमंत्री की तरफ से गुजरात में किया गया। ट्रंप की पत्नी मेनालिया ट्रंप इस कार्यक्रम में आई और इसके बाद उसी दिन चार-पांच कार्यक्रमों में देश के भिन्न-भिन्न कौनों में गई परन्तु उनकी वही एक ही ड्रेस थी। इस बात पर भारत में बहस छिड़ गई मध्यवर्ग व उच्चवर्ग के लोगों में। वे भारतीय महिलाओं की तुलना मेनालिया ट्रंप से कर रहे, अगर मेलानिया के स्थान पर कोई सामान्य भारतीय महिला होती तो अब तक पांच बार ड्रेस बदल चुकी होती। इसी कारण देखा जाए तो जितना विदेशी प्रभाव पश्चिम के लोगों पर भी नहीं है उससे कहीं ज्यादा प्रभाव भारतीय महिलाओं पर दिखायी

[396] सुशीला राय, एक अनपढ़ कहानी, पृ0 65

पड़ता है। पाश्चात्य प्रभाव ने जहां समाज में तीव्र गति से बदलावों को जन्म दिया है। वहीं पर पाश्चात्य प्रभाव ने भारतीय संस्कृति व हमारे जीवन मूल्यों को भी तोड़ने का काम किया है।

4.6.4 **भौतिकता का प्रभाव** -

इस भौतिकवादी युग मनुष्य मेहनत नहीं करना चाहता वह सब कुछ बैठे-बैठे चाहता है। विज्ञान के द्वारा जितने भी आविष्कार किए गए है वे सभी मनुष्य को भौतिकता की तरफ धकेल रहे है। आज मनुष्य चाहता है मेरे नौकर चाकर हो मैं उन्हे जैसा कहूँ वे वैसा ही करेंगे। मनुष्य के पास ऐसी मशीने होनी चाहिए जो उसके इशारे पर काम करें। आज कोई भी क्षेत्र नहीं जहां पर मशीनों का प्रभाव न हो। आधुनिकता के नाम पर लोग मेहनत अर्थात् परिश्रम से जी चुराते है। भौतिकता के नाम पर आज रिश्ते भी ऐसे चाहिए जो स्वयं की पसंद के हो। प्रभा खेतान जब यह जानती है कि डॉ. सर्राफ पांच बच्चों के पिता है, उसकी पत्नी जीवित है, फिर भी वह उसे पाना चाहती है। यह केवल भौतिकता का प्रभाव ही है जो हमें रिश्तों में दिखायी दे रहा है। इतना सब होने पर भी प्रभा खेतान डॉ. सर्राफ से अपना हक मांगती है वह कहती है कि ‘‘लुका-छुपी का यह खेल मुझसे बर्दाश्त नहीं होता, पार्क की बेंचों पर झाडियों की ओट में किया गया प्यार, प्यार नहीं होता। दिन के उजाले में आप मुझे अपने साथ रखिए, अपने जीवन में स्थान दीजिए।’’

‘‘मगर कैसे? तुम जानती हो मैं शादीशुदा हूँ।’’

’’हाँ जानती हूँ।’’

‘‘बच्चों की जिम्मेदारियां, मैं उन्हें छोड़ नहीं सकता।’’

‘‘मैं कब कहती हूँ आप अपनी पत्नी को छोड़ दीजिए, मैं क्यो चाहूँगी आप बच्चों को न संभाले?’’ ‘‘फिर तुम्हें?’’

‘‘क्या मुझे आपके परिवार में कोई कोना नहीं मिलेगा?’’

‘‘कैसी बातें करती हो।’’

‘‘हाँ, मैं तो आपसे कुछ मांग ही रही, मुझे कुछ नहीं चाहिए, धन-दौलत, नाम, मुझे बस आपका साथ चाहिए[397]।’’

इस भौतिकतावादी प्रभाव का ही परिणाम है कि आज समाज में एक महिला के पति को दूसरी महिला अपना बनाना चाहती है। इसी भौतिकता के प्रभाव ने हमारी संस्कृति को तोड़ने का काम किया है।

[397] प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, पृ0 98

निष्कर्ष

वर्तमान युग वैज्ञानिक और प्रगतिशील युग है। इस युग में जिस प्रकार भारतीय गांवों की उन्नति की अनेक योजनाएं बन रही हैं, उनके विकास हेतु आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक रूप से जो सामूहिक प्रयास किये जा रहे हैं, वे इस बात के जीवन्त साक्ष्य है कि भारतीय जीवन का एकमात्र आधार गांव है। जहां तक ग्राम शब्द की व्युत्पत्ति का संबंध है पाणिनी ने ग्राम की एक स्वतंत्र धातु ही स्वीकार किया है। जिसका अर्थ होता है आमंत्रण इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो जीवन के आमंत्रण का मौलिक अधिकार ग्रामों को ही है। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, और संन्यास तीनों आश्रम गृहस्थ आश्रम पर ही आधारित है और गृहस्थ तो ग्रामों में ही रहता है। इस तरह बहुत संभव है कि इसी धातु के अर्थ पर 'ग्राम' शब्द प्रचलित है। अशिक्षा ही समाज में सभी बुराइयां की जड़ है। शिक्षा ही वह साधन है जो व्यक्ति के विचारों में परिवर्तित करके उसके जीवन का दिशा निर्देश करती है। शिक्षा के द्वारा ही स्त्री सीमित और संकुचित दायरे से निकलकर अपने व्यक्तित्व का विकास कर पा रही है। शिक्षा के द्वारा ही वह अपने अधिकारों को पहचान कर उसके लिए संघर्ष करने लगी है। चेतना जाग्रत होने से वह समाज तथा परिवार में अपने दोयम दर्जे को नकारने लगी है। आज शहर के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्र में भी शिक्षा के स्तर में बढ़ोतरी हुई है लेकिन लड़कियों को शिक्षा प्राप्ति करने के लिए अभी भी बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। पढ़ने की इच्छा होते हुए भी कभी गरीबी तो कभी पारम्परिक मानसिकता तथा

लिंग भेद की नीति के चलते शिक्षा पाने के लिए स्त्री को संघर्ष करना पड़ रहा है।

विवाह एक संस्था भी है और एक संबंध भी। संस्था इस रूप में कि हमारे समाज का सामाजिक ढांचा इस पर खड़ा होता है। लेकिन यह एक संबंध भी है जो दो इंसानों के मध्य बनता है। मौजूदा विवाह संस्था स्त्री के लिए संबंध से अधिक बंधन है, क्योंकि संबंध में समानता का भावनिहित होता है। विवाह संस्था में पुरूष की बजाय स्त्री को कम अहमियत दी जाती है।

इस वक्त विवाह संस्था तथा उससे निर्मित संबंध संक्रमण काल से गुजर रहे है क्योंकि पूरा समाज बदल रहा है। प्राचीन मूल्य टूट रहे हैं और नए निर्मित नहीं हो पा रहे है। इसमें पुरूष की मानसिकता में अधिक बदलाव नहीं आया। किन्तु स्त्री की दृष्टि, खोज, उम्मीदें आगे तक जा चुकी है। यही कारण है कि मौजूदा प्रचलित विवाह संस्था को चुनौती मिल रही है। कुछ लोग अंतरजातिय विवाह कर रहे है तो कुछ बिना विवाह किये हुए सहजीवन जी रहे हैं, समलैंगिक संबंधों को विवाह संस्था का विकल्प माने पर भी जोर है परन्तु जरूरत विवाह संस्था से भागने या तोड़ने की बजाय उसमें दूसरे साथी को अपनी बात कहने देने का अधिकार प्राप्त हो। इस समय महिला की सुरक्षा का दायित्व पुरूष पर आ गया। इस कारण महिलाओं को पुरूष समाज में अबला, रमणी तथा भोग्या समझा जाने लगा। इसके साथ-साथ समाज में पुरुषप्रधान व्यवस्था का रूप लेने से बदलने लगा और समाज भी पुरुषप्रधान बनने लगा। इस पुरुषप्रधान व्यवस्था ने महिलाओं

को निजी व सामाजिक स्तर पर पैर की जूती की उपाधि तक दे डाली। महिलाओं पर सामाजिक स्तर पर दो प्रकार से अत्याचार होते थे एक तो मुस्लि शासकों के द्वारा दूसरे उनके परिवार के पुरूषों के द्वारा अर्थात् पुरुषप्रधान सामाजिक व्यवस्था के कारण। इस समाज में व्याप्त अनेक वर्णों, जातियों व समूहों के अतिरक्ति एक और जाति भी है। वह जाति है - महिला या स्त्री की। आज हम 21वीं शताब्दी के दो दशकों को पार कर गए हैं फिर भी महिलओं को अनेक प्रकार के उत्पीड़न व विद्रोह का सामना करना पड़ रहा है। प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक महिला का सामाजिक कद पुरुषप्रधान व्यवस्था निर्धारित करती आ रही है। महिलाओं को इस पुरुषप्रधान व्यवस्था ने ऐसा कोई भी अधिकार नहीं दिया जो पुरूषों को परम्परा से मिलते आ रहे हैं। हमारे समाज की व्यवस्था ही कुछ इस प्रकार है कि पुरुषप्रधान व्यवसथा ने उसे मजबुती से सपकड़ा हुआ है। इस व्यवस्था ने महिला को पुरूष से हीन समझा है। पुरुषप्रधान व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह महिलाओं को अपने घर भी स्वतंत्र नहीं रहने देती। वहाँ पर भी कुछ भी करने से पहले पिता-भाई की इजाजत की आवश्यकता होती है। लड़कियों को अपने पिता के घर भी पिता के साथ-साथ अपने भाईयों से भी डर कर रहना पड़ता है। कन्या भ्रूण हतया की जब से खबर समाज में फैलने लगी तो भी समाज के ठेकेदार मुँह पर ताला लगाकर बैठे रहे क्योंकि वे सभी पुरुषप्रधान व्यवस्था के उत्तराधिकारी है। भारत अति गरीब तबके को छोड़कर मध्यम वर्ग , निम्न मध्यम

वर्ग, उच्च मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग में उस समय शायद ही कोई ऐसा परिवार हो जिसे बेटे की चाहत नहीं हो गर्भ में लिंग की जाँच नहीं करवाई हो।

भारत का संविधान विश्व का सबसे बड़ा लिखित संविधान है इसमें सभी व्यक्तियों को स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है। किसी भी नागरिक के साथ जाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता है। किन्तु वास्तव में जमीनी स्तर पर ऐसा नहीं है। पितृसात्तात्मक व्यवस्था में पुरूष प्रधान समाज होता है। इसमें लिंग भेद के आधार पर महिलाओं को कम महत्त्व दिया जाता है और उन पर पुरूषों का अधिकार घोषित है।

भारतीय महिलाओं में जागरूकता व साक्षरता की भी बहुत कमी है। इसी कारण उन्हें अपने अधिकारों की जानकारी नहीं हो पाती। जब अधिकारों का ही पता नहीं होता तो वे कैसी कानूनी कार्यवाही कर सकती हैं। इसके साथ-साथ हमारे समाज में पुरुषप्रधान व्यवस्था व्याप्त है जिसके कारण भारतीय महिलाओं में डर बना रहता है। इसके कारण ही दूर जाती है और उन्हें अपने अधिकारेां से वंचित रखा जाता है। प्रभा खेतान प्रेम संबंधों को बहुत ही मानती है इसी कारण वह डॉ. सर्राफ के साथ अपने संबन्धों में बहुत गहरी आस्था रखते हैं। किंतु वह समाज के तानों को बर्दाशत नहीं कर पाती। इसके कारण उनका मानसिक संतुलन ठीक नहीं रहता है। वर्तमान समय में समाज में स्त्री की स्थिति दोयम दर्जे की है। मध्यकाल से ही पुरूष ने नारी की बुद्धि और मानसिकता पर सवालिया निशान लगाए रखा है। पुरूष ने महिला को सौन्दर्य की देवी, वासना शांत करने वाली प्राणी, बुद्धिहीन जीव

के रूप में ही देखा है। इस समय महिलाएं अपनी सामाजिक स्थिति को लेकर बहुत अधिक व्याकुल है क्योंकि अब उन्होंने अपनी सामजिक पड़ताना को लिखकर समाज के सामने रख दिया। कुछ समाज की महिला प्रतिनिधियों ने साहित्य साधना के द्वारा अपने आप समाज में स्थापित करने की कोशिश की है। महिलाएं प्रत्यक्ष रूप से निर्णय इसलिए भी नहीं ले पाती हैं कि इस पुरुषप्रधान व्यवस्था ने उसके सअन्दर यह भाव भर दिए है कि पुरूष ही उनका भला कर सकता है। इस कारण वे अपने निर्णयों के लिए पुरूषों पर निर्भर रही है।। परप्तु वास्तव में पुरूष कभी भी नहीं चाहता की महिलाएं उससे आगे बढ़े। पुरूषों के द्वारा बनाए गए सामाजिक यिमों को तोड़ने का काम करें। पुरूष ने सदैव महिलाओं की प्रगति में बाधा बनने का काम करते है। पुरूष इस बात को अच्छी प्रकार से जानते है कि अगर महिलाएं उनसे आगे आ गई तो उनके वर्चस्व को खतरा उत्पन हो जाएगा। पुरुषप्रधान व्यवस्था के कारण स्त्री को अपने अस्तित्व को बचाने के लिए अनेक संघर्ष करने पड़ रहे है। इन सभी संघर्षों के मध्य धर्म भी साथ-साथ चलता है। स्त्री का धार्मिक रूप से भी पुरुषप्रधान व्यवस्था में शोषण होता है। हमारी संस्कृति में धार्मिक परम्पराएं बिना किसी तर्क के पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होती रहती है। इन सभी परम्पराओं के पालन के रूप में स्त्री का बहुत अधिक शोषण होता है। धर्म के नाम पर भारतीय समाज में जितना शोषण स्त्री का होता है| पुरूष का उसके मुकाबले एक प्रतिशत भी नहीं होता। घर की चौखट के बाहर ही रंग-बिरंगी दुनिया पुरूष की और घर के अन्दर की चौखट का संसार स्त्री

के हिस्से आता है। संसार को आगे बढ़ाने के लिए पति और पत्नी का महत्त्व एक समान है। दोनों के मिलन से संसार आगे बढ़ता है। भारतीय संस्कृति में पति के लिए पत्नी और पत्नी के लिए पति देवता समान माने गए है। परन्तु बदलते परिवेश में हमारे सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में अब स्त्री का स्थान बराबरी का नहीं है क्योंकि समाज पुरूष प्रधान हो गया है। इसलिए पुरूष ने महिलाओं पर अपना अधिकार समझ लिया। यह अधिकार या हक पुरूष और भी प्रबल तरीके से समझने लगता है जब स्त्री उसकी पत्नी बन जाती है। पुरूष पत्नी को एक गुलाब की तरह देखता है। पुरूष कभी भी नहीं चाहता कि उसकी पत्नी उसके सामने किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता की बात करें।